श्री
कुलजम सरूप

निजनाम श्री कृष्णजी, अनादि अछरातीत ।
सो तो अब जाहेर भए, सब विध वतन सहीत ।।

★ प्रकास हिन्दुस्तानी-जंबूर ★

कछु इन विध कियो रास, खेल फिरे घर ।
खेल देखन के कारने, आइयां उमेदां कर ।।१।।

उमेदां न हुइयां पूरन, धाख[1] मन में रही ।
तब धनीजीऐं अंतरगत, हुकम कियो सही ।।२।।

तब तीसरो रचके खेल, स्यामाजी आए इत ।
तब हम भी आइयां तित, स्यामाजी खेले जित ।।३।।

स्यामाजी को धनिऐं, आवेस अपनो दियो ।
सब केहे के हकीकत, हुकम ऐसो कियो ।।४।।

इंद्रावती लागे पाए, सुनो प्यारे साथ जी ।
तुम चेतो इन अवसर, आयो है हाथ जी ।।५।।

।।प्रकरण।।१।।चौपाई।।५।।

१. प्रबल चाहना ।

साथ को प्रबोध - राग धनाश्री

याद करो तुम साथ जी, हाथ आयो अवसर जी ।
आप डार्‌या ज्यों पेहेले फेरे, भी डारियो निसंक[1] फेर जी ।।१।।

सुंदरबाई इन फेरे, आए हैं साथ कारन जी ।
भेजे धनिऐं आवेस देय के, अब न्यारे न होऐं एक खिन जी ।।२।।

सुपने में भी खिन ना छोड़ें, तो क्यों छोड़ें साख्यात जी ।
दया देखो पिउजी की हिरदे मांहें, विध विध की विख्यात जी ।।३।।

ऐसी बात करे रे पिउजी, पर ना कछू साथ को सुध जी ।
नींद उड़ाए जो देखिए आपन, तो आए हैं आप ले निध जी ।।४।।

सुपने में मनोरथ किए, तो तित भी पिउजी साथ जी ।
सुंदरबाई ले आवेस धनी को, न छोड़े अपना हाथ जी ।।५।।

धनी न देवें दुख तिल जेता, जो देखिए वचन विचारी जी ।
दुख आपन को तो जो होत है, जो माया करत हैं भारी जी ।।६।।

अंतरध्यान समें दुख दिए, ए आसंका[2] उपजत जी ।
तिन समें संसार न किया भारी, साथें दुख देखे क्यों तित जी ।।७।।

दुख तो क्यों ए न देवे रे पिउजी, ए विचार के संसे खोइए जी ।
ए याद वचन तो आवे रे सखियो, जो माया छोड़ते घनों रोइए जी ।।८।।

खेल याद देने को मेरे पिउजी, दुख दिए अति घनें जी ।
साथें मनोरथ एह जो किए, धनिऐं राखे मन आपनें जी ।।९।।

आपन माया की होंस जो करी, और माया तो दुख निधान जी ।
सो याद देने को रे साथ जी, पिउ भए अंतरध्यान जी ॥१०॥

नातो ए अपना रे पिउजी, अधखिन बिछोहा न सहे जी ।
एह विचार जो देखिए साथजी, तो तारतम प्रगट कहे जी ॥११॥

१. बेशक । २. शंका ।

इन समे तारतम की समझन, क्योंकर कहिए सोए जी ।
अनेक विध का तारतम इत, तब घर लीला प्रगट होए जी ॥१२॥
पेहेचानवे को पिउजी अपना, करूं तारतम विचार जी ।
साथ सकल तुम लीजो दिल में, न रहे संसे लगार जी ॥१३॥
पेहेली बेर तहां ए निध न हुती, तारतम जोत रोसन जी ।
तो ए फेरा हुआ रे साथ को, तुम देखो विचारी मन जी ॥१४॥
आसंका न रहे किसी की, जो कीजे तारतम विचार जी ।
सो रोसनाई ले तारतम की, आए आपन में आधार जी ॥१५॥
अब इन उजाले जो न पेहेचानो, तो आपन बड़े गुन्हेगार जी ।
चरने लाग कहे इंद्रावती, पिउजी के गुन अपार जी ॥१६॥

॥प्रकरण॥२॥चौपाई॥२१॥

राग धनाश्री

साथ सकल तुम याद करो, जिन जाओ वचन विसर जी ।
धनी मिले आपन कों माया में, जिन भूलो ए अवसर जी ॥१॥
सुंदरबाई अंतरगत कहे, प्रकास वचन अति भारी जी ।
साथ वचन ए चित दे सुनियो, देखियो तारतम विचारी जी ॥२॥
एही चाल तुम चलियो साथजी, एही पांउ परवान[१] जी ।
प्रगट मैं तुमको पेहेले कह्या, भी कहूं निरवान[२] जी ॥३॥
अब जिन माया मन धरो, तुम देखी अनेक जुगत जी ।
कई कई विध कह्या मैं तुमको, अजहूँ ना हुए त्रपत[३] जी ॥४॥
जब लग तुम रहो माया में, जिन खिन छोड़ो रास जी ।
पचीस पख लीजो धाम के, ज्यों होए धनी को प्रकास जी ॥५॥
अनेक विध कही मैं तुमको, ढील करो अब जिन जी ।
पांउ भरो ए वचन देखके, पेहेले बृज रास चलन जी ॥६॥

१. माफक (पहले फेरे अनुसार) । २. निश्चय । ३. संतुष्ट ।

रास प्रकास छोड़ो जिन खिन, जो बीतक अपनी परवान जी ।
ए छल तुमसे क्योंए न छूटे, पर मैं ना छोडूं तुमें निरवान जी ।।७।।
कहे इंद्रावती वचन पिउके, जिन देखाया धाम वतन जी ।
अब कोटक[1] छल करे जो माया, तो भी ना छूटे धनी के चरन जी ।।८।।

।।प्रकरण।।३।।चौपाई।।२९।।

लीला को प्रकास होना - आत्मा को प्रकास उपज्यो

ना कछू मन में ना कछू चित, ना कछू मेरे हिरदे एती मत ।
एक वचन सीधा कह्या न जाए, ए तो आयो जैसे पूर दरियाए ।।१।।
श्री सुंदरबाई धनी धाम दुलहिन, इंद्रावती पर दया पूरन ।
हिरदे बैठ कहे वचन एह, कारन साथ किए सनेह ।।२।।
वचन एक केहेते इन पर, हम घरों जाए के लेसी खबर ।
अद्रष्ट होए के कहे वचन, साथजी द्रढ करी लीजो मन ।।३।।
आपन करी जो पेहेले चाल, प्रेम मगन बीते ज्यों हाल ।
ए सब किया अपने कारन, एही पैंडा[2] अपना चलन ।।४।।
दिखलाया सब प्रगट कर, साथ सकल लीजो चित धर ।
ए जिन करो तुम हलकी बान, धनी कहावत अपनी जान ।।५।।
कहियत सदा प्रबोध[3] वचन, पर कबूं न बानी ए उतपन ।
तिन कारन तुम सुनियो साथ, आपन में आए प्राणनाथ ।।६।।
बोहोत सिखापन विध विध कही, पर नींद आड़े कछु हिरदे ना रही ।
नींद उड़ाओ देख नेहेचल रास, ज्यों हिरदे होए पिउ को प्रकास ।।७।।
अब नींद किए की नाहीं ए बेर, पिउ आए बुलावन उड़ाए अंधेर ।
पेहेले कह्या पिउ प्रगट पुकार, अंतर रहे केहेलाया आधार ।।८।।
मोहे एक वचन ना आवे अस्तुत, पर सोभा दई ज्यों कालबुत[4] ।
अस्तुत की इत कैसी बात, प्रगट होने करी विख्यात[5] ।।९।।

१. करोड़ो । २. रास्ता । ३. यथार्थ ज्ञान । ४. मानव तन । ५. वर्णन, प्रसिद्ध ।

फल वस्त जो भारी वचन, जीव भी न कहे आगे मन ।
सो प्रगट किए अपार, जो हुता अखंड घर सार ॥१०॥

प्रगट करी मूल सगाई, कई दिन आपन राखी छिपाई ।
वचन बड़ा एक ए निरधार, श्री सुंदरबाई केहेते जो सार ॥११॥

ए लीला होसी विस्तार, सूरज ढांप्या ना रहे लगार ।
ए लीला क्यों ढांपी रहे, जाकी रास धनी एती अस्तुत कहे ॥१२॥

ता कारन तुम सुनियो साथ, प्रगट लीला करी प्राणनाथ ।
कोई मन में ना धरियो रोष, जिन कोई देओ महामती को दोष ॥१३॥

ए तुम नेहेचे करो सोए, ए वचन महामती से प्रगट न होए ।
अपने घर की नहीं ए बात, जो किव[१] कर लिखिए विख्यात[२] ॥१४॥

ए बोहोत विध मैं जानूं घना[३], जो किव नहीं ए काम अपना ।
पर ए तो नहीं कछू किव की बात, केहेलाया बैठ हिरदे साख्यात[४] ॥१५॥

ए वचन सबे आवेस में कहे, उत्तमबाईऐं भली विध ग्रहे ।
यों कर कह्या आवेस दे, प्रगट लीला सबमें होसी ए ॥१६॥

मैं मन मांहें जान्या यों, जो किव होसी तो खेलसी क्यों ।
किव भी हुई वचन विचार, खेली इंद्रावती अनेक प्रकार ॥१७॥

कारज यों सब हुए पूरन, श्री सुंदरबाई की सिखापन ।
हिरदे बैठ केहेलाया रास, पेहेले फेरे के दोऊ किए प्रकास ॥१८॥

सुनियो साथ तुम एह कारन, धनी ल्याए धाम से आनंद अति घन ।
ज्यों ना रहे माया को लेस, त्यों धनिऐं कियो उपदेस ॥१९॥

ज्यों तुम पेहेले भरे पांउ, योंही चलो जिन भूलो दाउ[५] ।
भी देखो ए पेहेले वचन, प्रेम सेवा यों राखो मन ॥२०॥

अब कहूंगी तारतम रोसन कर, ए लीजो साथ नेहेचे[६] चित धर ।
कहे इंद्रावती अब ऐसा होए, साथ को संसे न रहेवे कोए ॥२१॥

१. कविता । २. प्रसिद्ध । ३. अधिक । ४. साक्षात । ५. सुअवसर । ६. निश्चय ।

बृज रास तुमको लीला कही, तारतम सों रोसनाई कर दई ।
अब इन फेरे के कहूं प्रकार, सब साथ ढूंढ काढों निरधार ॥२२॥

॥प्रकरण॥४॥चौपाई॥५१॥

श्री सुंदरबाई के अंतरध्यान की बीतक

श्री सुंदरबाई स्यामाजी अवतार, पूरन आवेस दियो आधार ।
ब्रह्मसृष्ट मिने सिरदार, श्री धाम धनीजी की अंगना नार ॥१॥

कई खेल किए ब्रह्मसृष्ट कारन, धनी दया पूरन अति घन ।
अनेक वचन सैयन को कहे, पर नींद आड़े कछू हिरदे ना रहे ॥२॥

तब भी अनेक विध कही, पर नींद पेड़ की आड़ी भई ।
भी फेर अनेक दिए द्रष्टांत, पर साथ पकड़ के बैठा स्वांत ॥३॥

तब अनेक धनिऐं किए उपाए, पर सुभाव हमारा क्योंए न जाए ।
तब अनेक विध कह्या तारतम, पर तो भी अपना न गया भरम ॥४॥

तब अनेक आपन को कहे विचार, कई विध कृपा करी आधार ।
तब अनेक पखें समझाए सही, तो भी कछू टांकी[1] लागी नहीं ॥५॥

तब विध विध कह्या अनेक प्रकार, तो भी भई सुध न सार ।
अनेक सनंधें[2] केहे केहे रहे, पख पचीस आपन को कहे ॥६॥

सो भी सेहे कर रहे आपन, नींद ना गई मांहें जागे सुपन ।
तो भी धनी की बोहोतक दया, अखंड बृज का सुख सब कह्या ॥७॥

भी वरन्यो सुख नेहेचल[3] रास, पहेले फेरे के दोऊ किए प्रकास ।
रास अखंड रात रोसन, बृज लीला अखंड रात दिन ॥८॥

दोऊ जुदी लीला कही अखंड, तीसरी अखंड लीला ए ब्रह्मांड ।
किए तारतमें मन वांछित काम, भी देखाया सुख अखंड धाम ॥९॥

दया धनी की है अति घन, कई विध सुख लिए सैयन ।
सेवा करी धनबाईऐं पेहेचान के धनी, सोभा साथ में लई अति घनी ॥१०॥

१. चोट । २. प्रकार । ३. निश्चय ।

साथ सों हेत कियो अपार, धंन धंन धनबाई को अवतार ।
कछुक लेहेर लागी संसार, ना दई गिरने खड़ी राखी आधार ॥११॥

बेहेवट[१] पूर[२] सह्यो न जाए, कर पकर के दई पोहोंचाए ।
तो भी सुध न भई आपन, क्योंए न छूटे मोह जल गुन ॥१२॥

तब लरे हमसों अपनायत करी, तो भी नींद हम ना परहरी[३] ।
कई विध कह्या आप आंझू आन, पर या समें हमको सुध न सान[४] ॥१३॥

तब फेर धनिऐं कियो विचार, साथ घरों ले जाना निरधार ।
तब संवत सत्रे बारोतरा बरख, भादों मास उजाला पख ॥१४॥

चतुरदसी बुधवारी भई, सनंध सबे श्री बिहारीजीसों कही ।
मध्यरात पीछे किया परियान[५], बिहारीजी को सुध भई कछु जान ॥१५॥

इन अवसर मैं भई अजान, मोहे फजीत करी गिनान ।
ना तो मोहे बुलाए के दई निध, पर या समें न गई मोहजल बुध ॥१६॥

इन समें हुती माया की लेहेर, तो न आया आतम को वेहेर[६] ।
तब मेरी निध गई मेरे हाथ, श्री धाम तरफ मुख कियो प्राणनाथ ॥१७॥

तब हमसों इसारत करी, कह्या धाम आड़े इंद्रावती खड़ी ।
मैं पैठ न सकों वह करे विलाप, तब मोहे बुलाए के कियो मिलाप ॥१८॥

ए केहेके साथ को सुनाई, ए इसारत तब हम न पाई ।
आप भी इत विरह कियो, पर मैं हिरदे में कछू न लियो ॥१९॥

तब अद्रष्ट भए हममें से इत, हम सारे साजे[७] बैठे तित ।
जो कछू जीव को उपजे भाउ, तो क्यों छोड़े हम पिउ के पांउ ॥२०॥

सो तो सब मैं देख्या द्रष्ट, पर बैठा जीव होए कोई दुष्ट ।
न तो क्यों सहिए धनी को बिछोह, जो जीव कछू जाग्रत होए ॥२१॥

एक वचन का न किया विचार, न कछू पेहेचान भई आधार ।
सुनो हो रतनबाई ए कैसा फेर, कौन बुध ऐसी हिरदे अंधेर ॥२२॥

१. विकट । २. बहाव । ३. त्यागी । ४. सुधि । ५. प्रस्थान । ६. दुःख । ७. साबित ।

ए बेसुधी कैसी आई, कछू पाई न सुध मूल सगाई ।
देखो रे सई ऐसी क्यों भई, ए सुख छोड़ मैं अकेली रही ॥२३॥

ए दुख की बातें हैं जो घनी, पर रह्यो जीव कछू अग्या धनी ।
इन समें जो निध न जाए, तो क्यों आवेस सरूप सहे अंतराए ॥२४॥

फिट फिट रे भूंडी[१] तूं बुध, तें क्यों ना करी अखंड घर सुध ।
महादुष्ट तूं अभागनी, ना सुध दई जीव को जाते धनी ॥२५॥

ए बातें तें क्योंकर सही, के या समें घर छोड़ के गई ।
के तूं विकल[२] भई पापनी, बिना खबर निध गई आपनी ॥२६॥

होए आवेस सरूप पेहेचान, पेहेचान पीछे न सहिए हान ।
तिन कारन जो यों न होए, तो प्रगट लीला क्यों करे कोए ॥२७॥

अब तोको कहा देऊं रे गाल[३], तूं भूली अवसर अपनो इन हाल ।
फिट फिट रे भूंडें तूं मन, तें अधरम कियो अति घन ॥२८॥

जीव बराबर बैठा होए, क्यों बैठा तूं ए निध खोए ।
एती बड़ाई तुझ पर भई, तुझ देखते ए निध गई ॥२९॥

तें ना दई जीव को खबर, नेठ झूठा सो झूठा आखिर ।
ए क्रोध है बड़ा समरथ, पर आया न मेरे समें अरथ ॥३०॥

गुन अंग इंद्री सबे घारन[४], कोई न जाग्या जीव के कारन ।
इन सूरमों किनहूं न खोल्या द्वार, जीव बैठा पकड़ आकार ॥३१॥

धिक धिक रे भूंडा जीव अजान, तेरी सगाई हुती निरवान ।
रे मुरख तोको कहा भयो, धनी जाते कछू पीछे ना रह्यो ॥३२॥

एती अगनी तें क्योंकर सही, अनेक विध तोको धनिएें कही ।
निपट जीव तूं हुआ निठोर[५], झूठी प्रीत न सक्या तोर ॥३३॥

ऐसा अबूझ अकरमी हुआ इन बेर, कछू न विचार्या न छोड़ी अंधेर ।
ऐसी आपसे ना करे कोए, खोया अपना परवस होए ॥३४॥

१. नीच । २. व्याकुल । ३. गाली । ४. नींद । ५. कठोर ।

ऐसा होए खांगडू[1] जुदा पड़्या, एती अगनिऐं अजू न चुड़्या[2] ।
पांच बरस का होए जो बाल, सो भी कछुक करे संभाल ॥३५॥

धनिऐं तोको बोहोतक कह्या, गए अवसर पीछे कछू ना रह्या ।
तेरी दोरी क्यों न टूटी तिन ताल, फिट फिट रे भूंडा कहां था काल ॥३६॥

ए तो केहेर[3] बड़ा हुआ जुलम, जान्या विरह क्यों सहे खसम ।
सो मैं अपनी नजरों देख्या, धरम हमारा कछू ना रह्या ॥३७॥

॥प्रकरण॥५॥चौपाई॥८८॥

विलाप - राग रामश्री

ओहि ओहि करती फिरों, और करों हाए हाए रे ।
पिउजी बिछोहा क्यों सहूं, जीवरा टूक टूक होए न जाए रे ॥१॥

फिट फिट रे भूंडा तूं सब्द, क्यों आई मुख बान रे ।
वाओ ना लगी तिन दिस की, निकस ना गए क्यों प्रान रे ॥२॥

तूं रे जुबां ऐसी क्यों वली, कहेते एह वचन रे ।
खैंच निकालूं तोको मूल थें, जहां से तूं उतपन रे ॥३॥

ए रे पिउजी सिधावते, वाचा क्यों रही तूं अंग ।
उजड़ ना पड़े दंतड़े, घन घाय मुख भंग रे ॥४॥

तें क्या सुने नहीं श्रवना, प्यारे पिउ के वचन रे ।
ए रे लवा तुझे सुनते, क्यों ना लगी कानों अगिन रे ॥५॥

चलना पिउ का सुनते, तोहे सब अंगों अगिन ना आई ।
सुनते आग झाला मिने, दौड़ के क्यों न झंपाई ॥६॥

नीच नैंन ए तुझ देखते, आया न आंखों लोहू ।
पिउ लौकिक जिनों बिछुरे, ऐसे भी रोवे सोऊ ॥७॥

रोवे लोहू आंखों आंझू चले, सो कहा भयो रोवनहारे ।
देखत ही पिउ चलना, निकस न पड़े तारे रे ॥८॥

१. रोड़े । २. गलना । ३. जुलम ।

क्यों ना आई बास नासिका, पेहेचान के प्रेमल ।
पिउ संग जीवरा न चल्या, अंदर लेता था सुगंध सकल ।।९।।

गुन अंग इन्द्रियों की, पिउ बांधते गोली प्रेम काम ।
पेहेचान करते पोहोंचावने, सनमंध देख धनी धाम ॥१०॥

गुन अंग इंद्री आकार के, आग पड़ो तुम पर रे ।
प्रेम न उपज्या तुमको, चलते धामधनी घर रे ॥११॥

एती जोगवाई ले तूं आकार, धनी चलते पीछे क्यों रह्या रे ।
अब जलो रे उड़ो खाखड़े[१], इन समें गल पिघल न गया रे ॥१२॥

अंग तोहे विरह अगिन की, न लगी कलेजे झाल[२] रे ।
ए विरहा ले अंग खड़ा रह्या, फिट फिट करम चंडाल रे ॥१३॥

हाथ पांव सब अंग के, सब उजड़ न पड़े संधान ।
अंग रोम रोम जुदे न हुए, अस्त होते तेज भान[३] ॥१४॥

ए रे निमूना भान का, मेरे पिउजी को दिया न जाए रे ।
ए जोत धनी इन भांत की, कोट ब्रह्मांड में न समाए रे ॥१५॥

ए जोत पकड़ी ना रहे, चली इंड फोड सुन्य निराकार ।
सदासिव महाविष्णु निरंजन, सब प्रकृत को कियो निरवार[४] ॥१६॥

सब्दातीत हुते जो ब्रह्मांड, जाए तिनमें करी रोसन रे ।
अछर[५] प्रकास करके, जाए पोहोंची धाम के बन रे ॥१७॥

सब गिरदवाए बन देखाए के, किए धाम मंदिर प्रकास ।
ब्रह्मानंद ब्रह्मसृष्ट में, प्रगट कियो विलास ॥१८॥

हांरे ए सुख सैयां लेवहीं, मेरे पिउजी की विरहिन ।
पीछे तो जाहेर होएसी, देसी अखंड सुख सबन ॥१९॥

ए रे धनी मेरे चलते, ना टूटी रगां[६] क्यों रही खाल रे ।
रूप रंग रस लेयके, क्यों ना पड़ी आग झाल रे ॥२०॥

१. सुखे पत्ते । २. ज्वाला । ३. सूर्य । ४. निरुपन । ५. अक्षर ब्रह्म । ६. नसें ।

हड्डी मांस रगां भेली क्यों रही, ए पकड़ के अंग अंधेर रे ।
धनी का बिछोहा क्यों सह्या, लोहू ना सूक्या तिन बेर रे ॥२१॥

अंग मेरे आकार के, सातों धात ना गई क्यों सूक रे ।
एहेरन घन के बीच में, क्यों ना हुई भूक भूक रे ॥२२॥

नैंन नासिका मुख श्रवना, भूंडी खोपड़ी पकड़ तूं क्यों रही रे ।
तोड़ इनों को जुदे जुदे, तूं क्यों उजड़ ना गई रे ॥२३॥

ए रे पिउजी सिधावते, क्यों ना लग्या कलेजे घाय ।
काल मेरा कहां चल गया, क्यों न काढी खैंच अरवाय ॥२४॥

नेहेचल[1] निध रे बिछुड़ते, कहां गई वह बुध ।
धिक धिक रे चंडालनी, तें क्यों भई ऐसी असुध ॥२५॥

ग्यान मेरा तिन समें, क्यों ना किया वतन उजास ।
तिन समें दगा दिया मुझको, मैं रही तेरे विस्वास ॥२६॥

गुन अंग इंद्री मेरे मुझसों, उलटे क्यों हुए दुस्मन रे ।
जिन समें हुआ रे बिछोहा, मेरे क्यों न हुए सजन रे ॥२७॥

साहेब मेरा चलते, मेरी सकल सैन्या अंग मांहें ।
सो काम न आए आतम के, अवसर ऐसो न क्यांहें ॥२८॥

फिट फिट रे सैन्या तुमको, क्या न हुती तुमे पेहेचान रे ।
जाते जीव का जीवन, तुम क्यों ले न निकसे प्रान रे ॥२९॥

जीवन चलते जीवरा, क्यों छोड़्या तें संग रे ।
अब कहूं रे तोको करम चंडाल, तूं तो था तिनका अंग रे ॥३०॥

नीच करम ऐसा चंडाल, तुझ बिना कोई न करे रे ।
श्री धनी धाम चले पीछे, इन जिमी में देह कौन धरे रे ॥३१॥

कौन विध कहूं मैं तुझको, कुकरमी करम चंडाल रे ।
तोहे अंग न उठी अगिन, तो तूं क्यों न झंपाया झाल रे ॥३२॥

१. निश्चय ।

झांप न खाई तें भैरव, क्यों कायर हुआ अवसर ।
तिल तिल तन न ताछिया[1], जाते ए सुख सागर ॥३३॥

गुन सागर धनी चलते, क्यों किया ऐसा हाल रे ।
बज्रलेपी रे स्वाम द्रोही, जीव क्यों चूक्या चंडाल रे ॥३४॥

दुष्ट अधरमी केता कहूं, हुआ बेमुख देते पीठ रे ।
ऐसा समया गमाइया, निपट निठुर[2] जीवरा ढीठ रे ॥३५॥

सब्दातीत के पार के पार, तिन पार जोत का था तेज रे ।
यासों था तेरा सनमंध, पर तें कछुए न राख्या हेज[3] रे ॥३६॥

तुझमें भी तेज है उन जोत का, और वाही कमल की बास रे ।
वह तेज फिरते रे तूं तेज, क्यों न पोहोंच्या जोत प्रकास रे ॥३७॥

अब कहा करूं कहां जाऊं, ए बानी धनी ढूंढों कित रे ।
पिउ पोहोंचाए मैं पीछे रही, करने विलाप रही इत रे ॥३८॥

अब ए बानी तूं कहां सुनसी, मेरे धाम धनी के वचन रे ।
बरनन करते जो श्रीमुख, सो अब काहूं न पाइए ठौर किन रे ॥३९॥

अब तारतम कौन केहेसी, कौन विचार कर देसी हेत ।
चौदे भवन में इन धनी बिना, ए बानी कोई ना देत ॥४०॥

बृजलीला रात दिन अखंड, रासलीला अखंड रात रे ।
पिउजी बिना विवेक कौन केहेसी, हुआ प्रतिबिम्ब तीसरा प्रभात रे ॥४१॥

भेख बागे का बेवरा, रह्या अग्यारे दिन रे ।
सात गोकुल चार मथुरा, कौन केहेसी विवेक वचन रे ॥४२॥

उत्तम विचार उत्तम बंधेज, और कई विध के द्रष्टांत रे ।
इन धनी बिना ए दया कर, कौन देसी कर खांत रे ॥४३॥

पन[4] बांध बरस चौदेलो, सास्त्र को अर्थ कौन लेसी ।
सो ए प्रकास इन पिउ बिना, एक साइत में समझाए कौन देसी ॥४४॥

१. छीलना । २. कठोर । ३. प्यार । ४. प्रण ।

दूध पानी रे जुदा कर, कौन केहेसी कर रोसन रे।
मोहजल गेहेरे में डूबते, कौन काढे या धनी बिन रे ॥४५॥

अठोतर सौ पख का, कौन काढ देसी सार रे।
सुख अछर अछरातीत के, कौन देसी बिना आधार रे ॥४६॥

नरसैयां कबीर जाटीय के, और कई साधों सास्त्र वचन रे।
काढ दे सार कौन इनका, करके एह मथन रे ॥४७॥

महाप्रले लों जो कोई, सास्त्र पढ करे अभ्यास।
बहु विध लेवे विवेकसों, कर मन द्रढ विस्वास ॥४८॥

तो भी न आवे ए विवेक, ना कछू ए मुख बान रे।
सो संग धनी के एक खिन में, कर देवें सब पेहेचान रे ॥४९॥

अब अबूझ टाल सुबुध देय के, कौन करसी चतुर वचिखिन[1] रे।
नेहेचल निध धनी धाम की, सो कहूं पाइए न चौदे भवन रे ॥५०॥

दूजा कौन देसी रे लड़ के, ऐसी जाग्रत बुध सुजान रे।
साथ धाम का जान के, कौन केहेसी हेत चित आन रे ॥५१॥

नींद उड़ाए जगाए के, कौन देसी घर आप पेहेचान रे।
खेल देखाए आप देह धर, कौन काढ़सी होए गलतान रे ॥५२॥

त्रैलोकी त्रिगुन माया मिने, हम बैठे थे रचके घर रे।
सो नेहेचल धाम में बैठाए के, याको कौन देखावे खेल कर रे ॥५३॥

अब ए चरचा कहां सुनसी, मूल वचन तारतम रे।
ए सुने बिना हम क्यों गलसी, बिना बानी इन खसम रे ॥५४॥

और घाट बिना गले, क्यों जीव टल होसी आतम रे।
तीन दिवाल आड़ी भई, सो उड़े ना बिना खसम रे ॥५५॥

पांच पचीस जो उलटे, होए बैठे दुस्मन रे।
सो नेहेचल घर में बैठाए के, कौन कर देवे सीधे सजन रे ॥५६॥

१. प्रवीण।

वैरी मार के कौन जिवावसी, उलटे भान के करे सनमुख रे ।
या दुख में इन धनी बिना, कौन देवे सांचे सुख रे ॥५७॥

बीच पट आतम परआतमा, कौन उड़ाए कर दे संग रे ।
इन दुलहे बिना दुलहिनसों, क्यों होसी रस रंग रे ॥५८॥

मोहजल पूर अंधेर में, जित काहू ना किसी की गम रे ।
तहां से काढ़ देवे सुख नेहेचल[1], ऐसा कौन बिना इन खसम रे ॥५९॥

इन भवसागर के जीवों में, वासना ढूंढ़ काढे छुड़ाए के फंद रे ।
आतम अपनी पेहेचान के, कौन पावे आनंद रे ॥६०॥

अब कौन रे करसी ऐसा वरनन[2], नेहेचल बृज रास धाम रे ।
ए कौन सुख सैयों को देय के, कौन मिलावे स्यामाजी स्याम रे ॥६१॥

आतम को रे जगाए के, कौन खोले आतम के श्रवन रे ।
अंतर पट उड़ाए के, कौन केहेसी मूल वचन रे ॥६२॥

फोड़ ब्रह्मांड आड़े आवरण[3], ताए पोहोंचावे अछर पार रे ।
सुख अखंड अछरातीत के, कौन देवे बिना इन भरतार रे ॥६३॥

ऊपर बाड़े वाट धाम की, कौन बतावे और रे ।
इन भेदी बिना भोम क्यों छूटहीं, क्यों पोहोंचिए अखंड ठौर रे ॥६४॥

साथ अजान अबूझ को, कौन लेसी सुधार रे ।
वासना सगाई पेहेचान के, कौन खोल दे नेहेचल द्वार रे ॥६५॥

सत सागर सुतेज में, बतावत नेहेचल धन रे ।
सो पूर लेहेरां चल गई, आवत अमोल अखंड रतन रे ॥६६॥

ए धन मेरे धनीय का, आया था मुझ कारन रे ।
सो धन खोया मैं नींद में, धनी देते कर कर जतन रे ॥६७॥

ए धन जाते मेरे धनी का, सो तूं देख के कैसे रही रे ।
फिट फिट भूंडी पापनी, तें एती पुकार क्यों सही रे ॥६८॥

१. अखंड । २. वर्णन । ३. पर्दा, आवरण ।

फिट फिट रे मेरी आतमा, तें क्यों खोई निध आई हाथ रे ।
कर दई धनी धाम पेहेचान, तो तूं क्यों न चली पिउ साथ रे ॥६९॥

संग पिउ के न चली, क्यों रही पिउसों बिछुर रे ।
अजहूं आह तेरी न उड़ी, याद कर अवसर रे ॥७०॥

त्राहि त्राहि करूं रे सजनी, पिउजी दियो मोहे छेह रे ।
जल बल विरहा आग में, भसम ना हुई जीव देह रे ॥७१॥

कई विध कह्या मोहे पिउजी, पर मैं कछू न कियो सनेह रे ।
अब तो बैठी धन खोए के, हाथ आया था जेह रे ॥७२॥

धनिऐं तो केहे केहे देखाइया, कर कर मुझसों एकांत रे ।
पर मैं चूकी चंडालन अवसर, अब पकड़ बैठी मैं स्वांत रे ॥७३॥

अब सब्दातीत निध धाम की, ए कौन केहेसी मुख बान रे ।
श्री धामके सुख की रे बीतक, कौन केहेसी वर्तमान[१] रे ॥७४॥

उठते बैठते खेलन की, सुध कौन कहे एह सुकन रे ।
बन जाए अन्हाए[२] के, कौन केहेसी सिनगार बरनन रे ॥७५॥

वस्तर भूखन की विगत, पिउ बिना कौन लेवे रे ।
ए सुख अनुभव अपना, सनमंध करके कौन देवे रे ॥७६॥

कई सुख अनुभव बन के, कई सुख सातों त्रट रे ।
सुख ताल मंदिर मोहोलन के, कौन देवे उड़ाए अंतर पट रे ॥७७॥

तीसरी भोम मोहोल सिनगार, और बैठ के आरोग पौढ़न रे ।
सुखपाल बैठ बन सिधावते, कौन केहेसी पीछला पोहोर दिन रे ॥७८॥

सुख चौथी भोम निरत के, सुख पांचमी भोम पौढ़न रे ।
ए सुख अनुभव कौन केहेसी, कई विध विलास रैन रे ॥७९॥

कई विध सुख तारतम के, जो कहे वचन सुख मूल रे ।
या विध हमें कौन कहे बरनन, सनमंध होए सनकूल[३] रे ॥८०॥

१. वर्णन, दिनचर्या । २. स्नान । ३. प्रसन्न ।

देत बिछोहा धनीधाम के, तुम क्यों न किया एह विचार रे ।
हुती आसा मुखी इंद्रावती, सुख चाहती अखंड अपार रे ॥८१॥

॥प्रकरण॥६॥चौपाई॥१६९॥

जाटी भाखा का विलाप

मेरी सैयल रे, साह आए थे मेरे घर ।
मैं पेहेचान ना कर सकी, पिउ चले पुकार पुकार ॥१॥

पिउ आए ना पेहेचाने, मोहे ना परी सुध ।
वचन कहे जो हेत के, भांत भांत कई बिध ॥२॥

नींद ऐसी भई निगोड़ी[१], ए तुम देखो रे सई[२] ।
दिन दो पोहोरे जागते, मोहे काली रैन भई ॥३॥

घर आए ना पेहेचाने, कहे विध विध के वचन ।
कान आंखां फूटियां, और फूटे हिरदे के नैन ॥४॥

सजन मेरा चल गया, अब रहूंगी विध किन ।
वस्त गई जब हाथ थें, अब रोवना रात दिन ॥५॥

मैं तो तब ना उठ सकी, पिउ चले बखत जिन ।
क्यों खोउं धनी अपना, जो तब पकड़ों चरन ॥६॥

जो मैं तबहीं जागती, तो क्यों जावे मेरा पिउ ।
क्यों छोड़ों खसम को, संग पिउ के मेरा जिउ ॥७॥

अब तरफ दसो दिस देखिए, तो गेहेरे मोह के जल ।
मेर जैसी लेहेरां मिने, मांहें मछ गलागल ॥८॥

जल मांहें भमरियां, कई बिध तीखे तान ।
कहूं सुख नहीं साइत[३] का, ए दुख रूपी निदान[४] ॥९॥

एक घोर अंधेरी आंखां नहीं, और ठौर नहीं बुध मन ।
विखम[५] जल ऐसे मिने, पिउ आए मुझ कारन ॥१०॥

१. बिना गुरु के । २. सखी । ३. क्षण । ४. अंत । ५. भीषण ।

मांहें भभूके[1] आग के, खाना अमल जेहेर अति जोर ।
पिउ पुकारे कई विध, मैं उठी ना अंग मरोर ॥११॥

पिउ मेरा मुझ वास्ते, आए ऐसे में आप ।
कई बिध जगाई मोहे, मैं कर ना सकी मिलाप ॥१२॥

अब कहा करूं कहां जाऊं, टूट गई मेरी आस ।
कहां वचन कौन बतावे, पिउ ना देखूं पास ॥१३॥

॥प्रकरण॥७॥चौपाई॥१८२॥

पुकार चले मेरे पिउजी, मैं तो नींदई में उरझीए ।
अब ढूंढे मेरा जीव रे, सो सजन अब कित पाइए ॥१॥

सई रे पिउ की बातें मैं कैसे कहूं, मोसों आए कियो मिलाप ।
मेरे वास्ते माया मिने, क्यों कर डार्या आप ॥२॥

आए वतन से पिउ अपना, देखाए के चले राह ।
आधा गुन जो याद आवे, तो तबहीं उड़े अरवाह ॥३॥

साहेब चले वतन को, केहे केहे बोहोतक बोल ।
धिक धिक पड़ो मेरे जीव को, जिन देख्या न आंखां खोल ॥४॥

सई रे अनेक भांत मोसों कही, मोहे सालत[2] हैं सो बैन रे ।
सो भी कह्या आंझू[3] आन के, पर मैं पलक न खोले नैन रे ॥५॥

आंखां पानी भर के, हाथ पकड़ किया सोर ।
आग परो मेरे जीव को, जाको अजहूं एही मरोर ॥६॥

सई रे अब मैं कहा करूं, मेरा हाल होसी बिध किन ।
वतन बैठ सैयन में, क्यों कर करूं रोसन ॥७॥

अब सुनो रे तुम सैंयां, कहूं सो बीतक बात ।
पानी तो पिउजी ले चले, अब तलफूं मछली न्यात ॥८॥

१. ज्वालाऐं । २. चुभते हैं । ३. आंसू ।

कर कर सोर जो वल्लभा[1], फिरे जो आप वतन ।
चले जो मेरे देखते, केहे केहे अनेक वचन ।।९।।

दुलहा मेरा चल गया, मेरी वले न जुबां यों ।
पल पल वचन पिउ के, मोहे लगे कटारी ज्यों ॥१०॥

आग पड़ो तिन देसड़े, जित पिउ की नहीं पेहेचान ।
तो भी सुध मोहे न भई, जो हुई एती हान ॥११॥

काट जीव टुकड़े करूं, मांहें भरूं मिरच लोंन[2] ।
ए दरद पिया इन भांत का, अब ए मेटे कौन ॥१२॥

आग लगी झाला उठियां, जीवरा जले रे मांहें ।
तलफ तलफ मैं तलफूं, पर ठंडक न दारू[3] क्यांहें ॥१३॥

दुलहासों जो मैं करी, ऐसी करे न दूजा कोए ।
विलख विलख पिउजी चले, पर मैं मूंदी आंखां दोए ॥१४॥

अब क्यों करूंगी मैं बातड़ी, सामी क्यों उठाऊंगी मोंह ।
मेरे हाथ ऐसी भई, खलड़ी उतारूं सिर नोंह[4] ॥१५॥

काटूं तन तरवारसों, भूक करूं हड्डियां तोर ।
खलड़ी उतारूं पेहेले उलटी, जीव काढूं यों जोर ॥१६॥

तरवार भाले कटारियां, मोहे काट करी टूक टूक ।
मेरे अंग हुए मुझे दुस्मन, जीव करे मिने कूक ॥१७॥

धाम धनी पेहेचान के, सीधी बात न करी सनमुख ।
कबूं दिल धनी का मैं न रख्या, अब क्यों सहूंगी ए दुख ॥१८॥

दरद मीठा मेरे पिउ का, ए जो आग दई मुझे तब ।
अति सुख पाया मैं इनमें, सो मैं छोड़ ना सकों अब ॥१९॥

ऐता सुख तेरे सूल में, तो विलास होसी कैसा सुख ।
पर मैं ना पेहेचाने पिउ को, मोहे मारत हैं वे दुख ॥२०॥

१. प्रीतम । २. नमक । ३. दवा । ४. नख ।

सब अंग मेरे टुकड़े करूं, भूक करूं देह जिउ ।
सो वार डारूं तुम दिस पर, इत सेवा हुई कहां पिउ ॥२१॥

हड्डियां जारूं आग में, मांहें मांस डारूं सिर ।
ए भूली दुख क्योंए न मिटे, ए समया न आवे फिर ॥२२॥

जरा जरा मेरे जीव का, विरहा तेरा करत ।
चरनें ल्यो इंद्रावती, पेहेले जगाए के इत ॥२३॥

॥प्रकरण॥८॥चौपाई॥२०५॥

चौपाई प्रगटी है

एक लवो[1] याद आवे सही, तो जीव रहे क्यों काया ग्रही ।
अब सुनियो साथ कहूं विचार, भूले आपन समें निरधार ॥१॥

गयो अवसर फेर आयो है हाथ, चेतन कर दिए प्राणनाथ ।
तब जो वासना बाई रतन, लीलबाई के उदर उतपन ॥२॥

श्री देवचंदजी पिता परवान, देख के आवेस दियो निरवान ।
वचन धनी के कहे निरधार, आवेस पिउजी को है अपार ॥३॥

इन बानिऐं ब्रह्मांड जो गले, तो वासना वानी से क्यों पीछी टले ।
वासना कारन बांधे बंध, कई भांते अनेक सनंध[2] ॥४॥

ए वानी कही मेरे धनी, आगे कृपा होसी घनी ।
हरखें साथ जागसे एह, रेहेसे नहीं कोई संदेह ॥५॥

साथ को घरों ले जाना सही, कोई माया में ना सके रही ।
खैंचे सबों को ए वानी, फिरसी घरों धनी पेहेचानी ॥६॥

भी वाही चरचाने वाही बान, वचन केहेते जो परवान ।
बृज रास श्रीधाम के सुख, साथ को केहेते जो श्रीमुख ॥७॥

पख पचीस वरनवे जेह, भी सुख वल्लभ[3] देवे एह ।
अंतरध्यान समे ज्यों भए, भी आए वचन पिया सोई कहे ॥८॥

१. शब्द । २. प्रकार । ३. प्रीतम ।

पेहेले फेरे हुआ है ज्यों, भी इत पिया ने किया है त्यों ।
सोई पिया और सोई दिन, देखो तारतम के वचन ।।९।।

सोई घड़ी ने सोई पल, मायाऐं बीच डार्यो वल ।
साथ को खिन न्यारे ना करे, बिना साथ कहूं पांउ ना धरे ॥१०॥

बेर ना हुई एक अधखिन, किया मायाऐं बिछोहा घन ।
मारकंड माया द्रष्टांत, मांगी धनी पे करके खांत ॥११॥

देखो माया को वृतांत[1], ए दूर होए तो पाइए स्वांत ।
ततखिन कंपमान सो भयो, माया मिने भिलके[2] गयो ॥१२॥

कल्पांत सात छियासी जुग, कियो मायाऐं बेसुध एते लग ।
कछुए ना भई खबर, अति दुख पायो रिखीस्वर ॥१३॥

तब नारायनजीऐं कियो प्रवेस, देखाई माया लवलेस ।
फिरी सुरत आए नारायन, याद आवते गए निसान ॥१४॥

याद आया सरूप बैठा जांहें, तब उड़ गई माया जानों हती नांहें ।
जाग देखे तो सोई ताल, बीच मायाऐं कियो ऐसो हाल ॥१५॥

माया की तो एह सनंध, निरमल नेत्रे होइए अंध ।
ता कारन कियो प्रकास, तारतम को जो उजास ॥१६॥

सो ए लेके आए धनी, दया आपन ऊपर है घनी ।
जाने देखसी माया न्यारे भए, तारतम के उजियारे रहे ॥१७॥

भले तारतम कियो प्रकास, देखाया माया में अखंड विलास ।
तारतम वचन उजाला कर्या, दूजा देह माया में धर्या ॥१८॥

।।प्रकरण।।९।।चौपाई।।२२३।।

सुन्दरसाथ की विनती

साखी- विनती एक सुनो मेरे प्यारे, कहूं पिउजी बात ।
आए प्रगटे फेर कर, करी कृपा देखे अपन्यात ।।१।।

१. हकीकत । २. मिल गया ।

श्री देवचंदजी हम कारने, निध तुमारे हिरदे धरी ।
वचन पालने आपना, साथ सकल पर दया करी ।।२।।
जनम अंध जो हम हते, सो तुम देखीते किए ।
पीठ पकड़ हम ना सके, सो फेर कर पकर लिए ।।३।।
अब जो कछूए हम में, होसी मूल अंकूर ।
जो नींद उड़ाए तुम निध दई, सो क्योंए ना छोडूं पिया नूर ।।४।।
पेहेले तो हम न पेहेचाने, सो सालत है मन ।
चरचा कर कर समझाए, कहे विध विध के वचन ।।५।।
चाल- ऐसे अनेक वचन कहे हमको, जिन एक वचने पेहेचाने तुमको ।
तुम दई पेहेचान विध विध कर, पर निरोध बैठा हिरदा पकर ।।६।।
तब हंस कर आंझू आनके कह्या, पर तिन समे हम कछु ए ना लह्या ।
तब तारतम केहे देखाया घर, हम तो भी ना सके पेहेचान कर ।।७।।
तब हममें से अद्रष्ट भए, कोई कोई वचन हिरदे में रहे ।
जो या समें खबर ना लेते तुम, तो मोहजल अति दुख पावते हम ।।८।।
यों जान के आए हम मांहें, आए बैठे प्रगटे तुम जांहें ।
ज्यों आपन पेहेले बृज में हते, नित प्रते पियासों प्रेमें खेलते ।।९।।
अनेक खेल किए आपन, पूरन मनोरथ सब किए तिन ।
अग्यारे बरस लो लीला करी, कालमाया इतही परहरी ॥१०॥
जोगमाया कर रास जो खेले, कई सुख साथ लिए पिउ भेले ।
करी अंतराए देने को याद, हम दुख मांग्या पिउपे आद ॥११॥
सोई देख के आए ज्यों, फेर अब प्रगट हुए हैं त्यों ।
धनी जब करें अपन्यात, मनचाह्या सुख देवें साख्यात ॥१२॥
तिन समें धाख रहीती जोए, अब इत सुख देत हैं सोए ।
अब सुनो पिउ कहूं गुन अपने, अवगुन मेरे हैं अति घने ॥१३॥

तुमारे मन में न आवे लवलेस, पर मैं जानों मेरे मन के रेस[1] ।
वार डारों तुम पर मेरी देह, तुम किए मोसों अधिक सनेह ॥१४॥

घोली घोली मैं जाऊं तुम पर, उरिनी मैं होऊंगी क्यों कर ।
उरिनी[2] होना तो मैं कह्या, माया लेस हिरदे में रह्या ॥१५॥

अनेक बार मैं लेऊं वारने, तुम अपनी जान गुन किए घने ।
मैं वार डारूं आतम अपनी, पर सालत सोई जो करी दुस्मनी ॥१६॥

क्यों छूटोंगी ए गुन्हे हो नाथ, सांची कहूं मेरे धाम के साथ ।
तुम साथ मिने मोहे देत बड़ाई, पर मैं क्यों छूटोंगी बज्रलेपाई ॥१७॥

तुम गुन किए मोसों अति घन, पर अलेखे मेरे अवगुन ।
तुम गुन किए मोसों पेहेचान कर, मैं अवगुन किए माया चित धर ॥१८॥

अब बल बल जाऊं मेरे धनी, मेरे मन में हाम है घनी ।
असत मंडल में हासल अति बड़ी, मैं पिउजी की उमेद ले खड़ी ॥१९॥

जो मनोरथ किए मांहें श्रीधाम, सो पूरन इत होए मन काम ।
जो बिध सारी कही है तुम, सो सब द्रढ़ करी चाहिए हम ॥२०॥

सुख धाम के जो पाइए इत, सो काहूं मेरी आतम न देखे कित ।
इन अंग की जुबां किन बिध कहे, जो सुख कहूं सो उरे रहे ॥२१॥

ए सोभा सब्दातीत है घनी, और सब्द में जुबां आपनी ।
ए सुख विलसूं होए निरदोस, होए फेरा सुफल दया तुम जोस ॥२२॥

इतने मनोरथ होंए पूरन, तब जानों दया हुई अति घन ।
फेर फेर दया को तो कह्या घना, जो कर न सकी कछू बस आप अपना ॥२३॥

अब मनसा वाचा करमना कर, क्योंए ना छोडूं अखंड घर ।
नैनों निरखूं करी निरमल चित, रूदे राखूं पिउ प्रेमें हित ॥२४॥

कर परनाम लागूं चरने, करूं सेवा प्यार अति घने ।
करूं दंडवत जीव के मन, देऊं प्रदखिना[3] रात ने दिन ॥२५॥

१. नुकसान, क्षति । २. ऋण मुक्त । ३. परिक्रमा ।

कृपा करत हो साथ पर बड़ी, भी अधिक कीजो घड़ी घड़ी ।
इंद्रावती पांउ परत आधार, धनी धाम के लई मेरी सार ॥२६॥

॥प्रकरण॥१०॥चौपाई॥२४९॥

आपन में बैठे आधार, खेल देखाया खोल के द्वार ।
अब माया कोटान कोट करे प्रकार, तो इत साथ को न छोडूं निरधार ॥१॥

बुलाए सैयों को चले वतन, क्यों न होए जो कहे वचन ।
मन के मनोरथ पूरन कर, नेहेचे[1] धनी ले चलसी घर ॥२॥

अब जो आपन होइए सनमुख, तो धनी बोहोत विध पावें सुख ।
कई विध दया साथ पर कर, सब विध के सुख देवें फेर ॥३॥

फेर कर भलो आयो अवसर, खुले भाग धनी चित में धर ।
आपन छोड़ने न करें संसार, पर धनी धाम बिछोहा न सहे लगार ॥४॥

बिछोहा नहीं कछू पख तारतम, सुपन में माया देखें हम ।
सुपन बिछोहा धनी ना सहे, तारतम वचन प्रगट कहे ॥५॥

ल्याए वचन तारतम सार, खोले पार के पार द्वार ।
जानों जिन आसंका रहे, साथ ऊपर धनी एता ना सहे ॥६॥

धनी के गुन मैं केते कहूं, मैं अबूझ कछू बोहोत ना लहूं ।
धनी के गुन को नाहीं पार, कर ना सके कोई निरवार ॥७॥

मैं केते नजरों देखे सही, पर गुन मुखसे न सके कही ।
ना कछू किनका भोम गिनाए, सागर लेहेरें गिनी न जाए ॥८॥

मेघ की बूंदे जेती परे, ना कोई वनस्पति निरमान करे ।
जदिप याको निरमान होए, पर गुन धनीके ना गिने कोए ॥९॥

इन बेर के भी कहे न जाए, तो और बेर के क्यों कहूं जुबांए ।
पेहेले फेरे की क्यों कहूं बात, गुन जो किए धनी साख्यात ॥१०॥

१. निश्चय ।

क्यों धनी गुन गिनूं इन आकार, पर कछुक तो गिनना निरधार ।
इंद्रावती कहें मैं गुन गिनों, कछुक प्रकासूं आपोपनों ॥११॥

॥प्रकरण॥११॥चौपाई॥२६०॥

श्री धनीजी के गुन

मैं लिखूं श्री धनीजी के गुन, जो रे किए मोसों अति घन ।
जोजन पचास कोट जिमी केहेलाए, आड़ी टेढ़ी खड़ी सब मांहें ॥१॥

चौदे लोक बैकुंठ सुंन जोए, जिमी बराबर करूं सोए ।
मैं प्रगट बिछाए करूं एक ठौर, टेढ़ी टाल करूं सीधी दोर ॥२॥

कागद धर्‌यो मैं याको नाम, गुन लिखने मेरे धनी श्रीधाम ।
चौदे भवनकी लेऊं वनराए, तिनकी कलमें मेरे हाथ गढ़ाए ॥३॥

गढ़ते सरफा करूं अति घन, जानों बड़ी छोही उतरे जिन ।
ए सरफा मैं फेर फेर करूं, अखंड धनी गुन हिरदे धरूं ॥४॥

बारीक टांक मेरे हाथों होए, ऐसी करूं जैसी करे न कोए ।
कोई तो केहेती हों जो माया लागी तुम, बाहोतक कह्या जो पेहेले हम ॥५॥

तुमको माया लागी होए सत, तुम बिना और सबे असत ।
इन जिमी ऊपर के लेऊं सब जल, और लेऊं सात पाताल के तल ॥६॥

जल छे लोक के लेऊं लिखनहारी, एक बूंद ना छोडूं कहूं न्यारी ।
सब जल मिलाए लेऊं मेरे हाथ, गुन लिखने मेरे श्रीप्राणनाथ ॥७॥

बाकी स्याही करूं मैं अति विगत, एक जरा न जाए समारूं इन जुगत ।
ए कागद कलम मस[1] कर, मांहें बारीक आंक लिखूं चित धर ॥८॥

गुन जो किए पिउ तुम इत आए, सो इन जुबां मैं कहे न जाए ।
देह माफक मैं लिखूं परमान, एक पाओ लवे का काढ़ूं निरमान ॥९॥

अब लिखती हूं साथ देखियो उजास, मैं गजे[2] माफक करूं प्रकास ।
मैं बोहोत सकोडूं आंक लिखते ए, जिन जानों मींडे होंए बड़े ॥१०॥

१. स्याही । २. बुद्धि।

प्रथम एकड़ा करूं एक चित, लगता मींडा धरूं भिलत ।
मेरे हाथ अखर कुसादे[1] न होए, मैं डरूं जानों मिले न दोए ॥११॥

यों करते ए दस जो भए, मींडा धरके एक सौ कहे ।
भी एक धरके गिनूं हजार, धनी गुन दया को नाहीं पार ॥१२॥

भी लगता मींडा धरूं एक, जीवसे गिनूं दस हजार विसेक ।
भी एक धरके लाख गिनाए, भी धरूं ज्यों दस लाख हो जाए ॥१३॥

कोट होवे मींडा धरते सातमां, दस कोट करूं मींडा धरके आठमां ।
नवमां धरके करूं अबज, गुन गिनती जाऊं करती कबज ॥१४॥

दस धरके करूं अबज दस, गुन गिनते आवे मोहे अति घनो रस ।
अग्यारे धरके करूं खरब एक, लिखते गुन धनी ग्रहूं विसेक ॥१५॥

बारे धरके दस करूं खरब, पेहेले यों गिनके किन कहे न कब ।
तारतम कहे और कौन गिने गुन, हुआ न कोई होसी हम बिन ॥१६॥

मैं गुन गिनूं श्रीधामधनी के रे, पर कमी कागद कलम मस[2] मेरे ।
कमी तो केहेती हूं जो बैठी माया मांहें, ना तो कमी नहीं कछुए क्यांहें ॥१७॥

साथ कारन मैं करूं पुकार, देखों वासना मोहजल वार पार ।
तेरह धरके गिनूं गुन नील, घने समावें गुन हिरदे असील ॥१८॥

चौदे धरके करूं नील दस, गुन प्रकास लेऊं धनी जस ।
पंद्रे धरके करूं पदम, मेरे धनी के गुनकी मैं करूँ गम ॥१९॥

सोले धरके करूं पदम दस, गुन नजरों आवते हुए धनी बस ।
सत्रे धरके करूं गुन अंक, अठारे धरूं ज्यों होए गुन संक ॥२०॥

सुरिता करूं धरके उनईस, पत गुन ग्रहूं धरके बीस ।
अंत करूं धरके इकैस, मध करूं गुन दोए धर बीस ॥२१॥

एकड़ा ऊपर तेईस मींडे धरूं, प्रारध करके लेखा मेरा करूं ।
लौकिक लेखे गुन न गिनाए, मेरे धनी के गुन यों गिने न जाए ॥२२॥

१. फैलाव । २. स्याही ।

हिसाब करूं साथ देखियो विचार, गुन जाहेर हुए प्राणके आधार ।
प्रारध गुने एक मींडेसों बढ़े, दूजे सों हर एक यों चढ़े ॥२३॥

यों करते ए होवें जेते, इन बिध चढ़ते जांए तेते ।
ए हिसाब मेरी आतमा करे, गुन धनी हिरदे अंतर धरे ॥२४॥

लिखते गुन धनी हिरदे आए, पर डरूं जानों कागद में न समाए ।
कलमों को मेरा जीव ललचाए, गढ़ते गढ़ते जानों जिन उतर जाए ॥२५॥

सरफा करूं मैं लिखते स्याही, जिन लिखते अधबीच घट जाई ।
यों धरते धरते मींडे रहे भराए, वार किनार सब रहे समाए ॥२६॥

ए कागद यों पूरन भया सही, स्याही कलमें कछू बाकी न रही ।
अब ए गुन गिनूं मैं नीके कर, आतम के अंदर ले धर ॥२७॥

ए तो गुन गिने मैं चित ल्याए, पर इन धनी के गुन यामें न समाए ।
भी करूं दूजे लिखने के ठाम, गुन लिखने मेरे धनी श्रीधाम ॥२८॥

ए गुन मिल जमें भए जेते, या बिध ऐसे कागद लिखे एते ।
ऐसे कागद ऐसी स्याही कलम, मांहें बारीक आंक लिखे हैं हम ॥२९॥

इन कलमों की मैं देखी अनी, कछू कर न सकी बारीक घनी ।
ए गुन गिन मैं एकठे किए, सो अपने हिरदे में लिए ॥३०॥

कलमें समारी जोस बुध बल, घडूं रास[1] कर काढ़ के बल ।
एक जीव कहियत है कथुआ, ए जो जिमी पर पैदा हुआ ॥३१॥

कथुए के पांउ का गुन जेता भाग, कलमों की टांक मैं देखी चीर लाग ।
इन अनियों आंक लिखे यों कर, ए जेता कागद एती बेर फेर फेर ॥३२॥

यों लिख लिख के मैं गिने गुन, पर मेरे धनी के गुन हैं अति घन ।
ए गुन मिलाए के एकठे किए, सो नीके कर मैं चित में लिए ॥३३॥

ए लिखते मोहे केती बेर भई, तिनका निरमान काढ़ना सही ।
जेते मिल के भए ए गुन, तेते बांटे किए एक खिन ॥३४॥

१. सूक्ष्म, अत्यंत बारीक ।

बेर भई एक बांटे जेती, ए सब कागद लिखे मांहें बेर एती ।
ए लिख लिख के मैं लिखे अपार, अब ए बेर निरने करूं निरधार ॥३५॥

गुन जेते महाप्रले भए, वाही जोस में लिख गुन कहे ।
बीच में स्वांस न खाया एक, ढील ना करी कछू लिखते विसेक ॥३६॥

एह जमें मैं गुन की कही, श्रीसुंदरबाईऐं सिखापन दई ।
साथ जाने लेखा जोर किया अपार, पर मेरे जीव के दरद की न दबी किनार ॥३७॥

जीव मेरा बड़ा वतनी पात्र, अजूं जीव जानें ए लिख्या तुछ मात्र ।
गुन तो बाकी भरे भंडार, सोई भंडार गुन गिनूं आधार ॥३८॥

ए गुन गिने मैं हिरदे विचार, गुन जेते भंडार गिने निरधार ।
गिनते गिनते बाकी देखे अपार, तिनका भी मैं करना निरवार ॥३९॥

मैं ना करूं तो दूजा करे कौन, कर निरवार ग्रहूं धनी के गुन ।
बाकी भंडार का लेखा देऊं मेरे पिउ, ए मुस्किल नहीं कछू मेरे जिउ ॥४०॥

ए गुन गिन किए जीवें अपने हाथ, पल पल पसरे गुन प्राणनाथ ।
ए सब तो कहूं जो गुन ठाढ़े रहे, ए गुन मन की न्यात दौड़े जाए ॥४१॥

अब एता तो मैं किया निरमान, और बाकी कहूंगी मांहें फुरमान ।
एक खिन के मैं बांटे किए, गुन जेते भाग विचार के लिए ॥४२॥

तामें बेर एक बांटे की कही, पिया गुन एते में तेते किए सही ।
ए गुन गिनते मेरा कारज सरया, आतम मूल सरूप हिरदे में धरया ॥४३॥

सारे जनमके क्यों कहूं गुन, पिया देह धर आए किए धंन धंन ।
गुन पांच जनम के क्यों कहूं सोय, धनी दया आई धनी की खुसबोए ॥४४॥

ए गुन गिने मैं अस्थिर आकार, ना तो यों क्यों गिनूं मेरे प्राण के आधार ।
अब बात करसी तुम अग्या केरी, मुझे आसा इत जाग उड़ाऊं अंधेरी ॥४५॥

पिउ तुम आए माया देह धर, साथकी मत फिर गई क्यों कर ।
हांसी करसी पिउ साथ पर, क्या करसी माया जब मांगी घर ॥४६॥

तुम लई खबर हमारी ततखिन, ले आए तारतम देखाया वतन ।
पिया हांसी करसी अति जोर, भुलाए मायाऐं कर बैठाए चोर ॥४७॥

अब करेंगे जाए वतन बात, माया अमल चढ़्यो निघात[1] ।
पिउ कई विध तारतम कियो रोसन, तो भी क्योंए न भैयां चेतन ॥४८॥

लेवे इंद्रावती वारने गुन जेते, इत सुख दिए हमको एते ।
घर के सुख की इत कैसी बात, घर के सुख घरों होसी विख्यात[2] ॥४९॥

चरनों लाग कहें इंद्रावती, गुन न देखे किन एक रती ।
धनी जगाए के देखावसी गुन, तब हांसी होसी अति घन ॥५०॥

॥प्रकरण॥१२॥चौपाई॥३१०॥

साथ को सिखापन

सुनो साथ मेरे सिरदार, वचन कहूं सो ग्रहो निरधार[3] ।
एते गुन आपनसों कर, बैठे आपन में माया देह धर ॥१॥

भानो भरम वचन देख कर, छोड़ो नींद रोसनी हिरदे धर ।
श्रीधाम के धनी केहेलाए, सो बैठे आपन में इत आए ॥२॥

सेवा कीजे पेहेचान चित धर, कारन अपने आए फेर ।
भी अवसर आयो है हाथ, चेतन कर दिए प्राणनाथ ॥३॥

इन ऊपर और कहा कहूं, मैं श्रीधनीजी के चरने रहूं ।
कर जोड़ करूं विनती, दूर ना होऊं बेर पाओ पल जेती ॥४॥

॥प्रकरण॥१३॥चौपाई॥३१४॥

जीव को सिखापन

मेरे अंध अभागी जीव, तूं क्यों सूता इत ।
बिध बिध धनिऐं जगाइया, अजहूं ना घर सूझत ॥१॥

आगे भी तें कहा कियो, चल गए पिउ जब ।
अवगुन ना देखे अपने, पिउ मेहेर करी फेर अब ॥२॥

१. विकट । २. प्रसिद्ध । ३. निश्चित ।

धाम धनी तुझ कारने, आए माया में दोए बेर।
मेहेर ना देखे पिउ की, ऐसो हिरदे निपट अंधेर ।।३।।

आप पकड़ तूं अपना, बल कर आंखां खोल।
दूध पानी दोऊ जाहेर, देख नीके तारतम बोल ।।४।।

पेहेले तो आंखां फूटियां, अब तो कछुक संभाल।
ए जासी अवसर हाथ से, पीछे होसी कौन हवाल ।।५।।

आगे उलटा हुआ अकरमी, अजहूं ना करे कछु सुध।
जागत नहीं क्यों जोर कर, ले हिरदे मूल बुध ।।६।।

पुकार सुनी दोऊ पिउ की, वतन देखाया नजर।
उठी ना अंग मरोर के, अब आई नजीक फजर ।।७।।

तारतम देख विचार के, पिउ ल्याए बेर दोए।
एती आग सिर पर जली, तूं रह्या खांगडू होए ।।८।।

।।प्रकरण।।१४।।चौपाई।।३२२।।

मेरे जीव अभागी रे, जिन भूले तूं अब।
इन मोहजल से काढ़न वाला, ऐसा ना मिलसी कोई कब ।।१।।

ए गुन तूं याद कर, जो किए अनेक सजन।
तूं क्यों सूता जीव अभागी, देकर साहेबी मन ।।२।।

पेहेले तें काढ़े वचन, सो क्या मन की दोर।
बुध मन तेरे बैठे रेहेसी, जीव को क्रोध काढ़सी जोर ।।३।।

जीव तूं क्यों होत है निलज, तोहे अजूं ना लगे घाए।
याद करके पिउ को, क्यों ना उड़े अरवाए ।।४।।

जो अब जीवरा भूलसी, तो देखी तेरी बिध।
काढ़ूंगी तुझे जोरसे, करके बुरी सनंध ।।५।।

पेहेले तो तें बुरी करी, अब जिन चूके अवसर ।
पिउ तोकों वतन में, बुलावत हैं हंसकर ।।६।।

ससुई[1] सो भी यों कहे, मैं हाथों अपना मार ।
पुनों[2] की बधाई में, देऊं कोट सिर उतार ।।७।।

क्यों ना देखे ए वचन, भट परो मेरे जिउ ।
तूं लेत निमूना किनका, तूं कौन कौन तेरा पिउ ।।८।।

दुनियां चौदे भवन में, जो देखिए मूल अर्थ ।
जो लेवे तेरा निमूना, ऐसा ना कोई समरथ ।।९।।

तूं निमूना माया जीव का, क्यों कर लेवे इत ।
ए दाग तेरा क्यों छूटहीं, ए तुझे लाग्या जित ॥१०॥

अजूं सुध तोको न होत, तेरी क्यों हुई ऐसी रसम ।
याद कर अपना वतन, जो तें सुनी बात खसम ॥११॥

तूं भूल जात क्यों वचन, जो श्रीधाम धनी कहे आप ।
एक आधा सुकन विचारते, तो पलक न छोड़े मिलाप ॥१२॥

तोको कहूं अभागी अकरमी, जो जाग्या ना एते सोर ।
सात बेर तोको कहूं सोहागी, जो तूं उठे अंग मरोर[3] ॥१३॥

।।प्रकरण।।१५।।चौपाई।।३३५।।

मेरे जीव सोहागी रे, जिन छोड़े पिउ कदम ।
दूसरी बेर माया मिने, तुझ कारन आए खसम ।।१।।

गुन धनी के याद कर, पकड़ पिउ के पाए ।
सुखे बैठ सुखपाल में, देसी वतन पोहोंचाए ।।२।।

खेल हंस कर बातड़ी, पेहेचान अपना पिउ ।
दो बेर धनी तुझ कारने, आए जान अपना जिउ ।।३।।

१. माया का जीव । २. पुनूं । ३. खुशी से (अंगडाई ले कर) ।

हैं कैसे धनी देख तूं, तोसों करी है ज्यों।
आप ना रख्या आपना, सो याद न कीजे क्यों ।।४।।
कर हिंमत बांध कमर, ले हुकम सब हाथ।
पिउ पास हो पेहेचान के, और छोड़ सब साथ ।।५।।
आप कहियो अपने साथ को, जो तुझे खुले वचन।
सुध तो नहीं कछू साथ को, पर तो भी अपने सजन[1] ।।६।।

।।प्रकरण।।१६।।चौपाई।।३४१।।

मेरे साथ सोहागी[2] रे, पिउसों क्यों न करो पेहेचान।
पेहेले चले पेहेचान बिना, फेर आए सो अपनी जान ।।१।।
सोई पिउ सोई बातड़ी, फेर सोई करे पुकार।
कारन अपने पिउ को, आंखों आवे जलधार ।।२।।
सोई नसीहत[3] देत सजन, खैंचत तरफ वतन।
पिउ पुकारें बेर दूसरी, अब क्यों होंए पीछे आपन ।।३।।
सोई कूकां[4] करे पेहेले की, सो क्यों न समझो बात।
न तो दिन उजाले खरे दो पोहोरे, अब हो जासी रात ।।४।।
फेर पटकोगे हाथड़े, और छाती देओगे घाउ।
चल जासी पिउ हाथ से, फेर न पाओगे दाउ ।।५।।
विलख विलख कहे वचन, रोए रोए किए बयान।
प्रेम करे अति प्रीतसों, पर साथ को सुध न सान[5] ।।६।।
माया देखी बीच पैठ के, पिउ के उजाले तुम।
विध विध खेल देखावने, पिउ ल्याए तारतम ।।७।।
ए जो मांगी तुम माया, सो देखे तीन संसार।
अब साथ पिउ संग चलिए, ज्यों पिउ पावें करार ।।८।।

१. स्वजन (अभिन्न अंग) । २. सुहागिन - आत्माएँ । ३. सिखापन । ४. पुकार, शोर । ५. सुधि ।

पिउ पांच बेर हम वास्ते, सागर में डारया आप ।
सो नजरों न आवे प्रेम बिना, बिना मेहेर या मिलाप ।।९।।

भले देखो तुम आकार को, पर देखो अंदर का तेज ।
धनीधाम के साथसों, कैसा करत हैं हेज[१] ॥१०॥

अब कैसी विध करूं तुमसों, कछू ना पेहेचाने सजन ।
सोर हुआ एता तुम पर, क्यों आवे नींद आंखन ॥११॥

ना गई नींद अंदर की, क्यों एते बान सहे ।
जाग चलो संग पिउ के, पीछे करोगे कहा रहे ॥१२॥

तुमें धनी बिना कौन दूसरा, ए उड़ावे अंधेर ।
तुम देखो साथ विचार के, जिन भूलो इन बेर ॥१३॥

एक बेर भूले आदमी, ताए और बेर आवे बुध ।
ए चोटां सहियां सिर एतियां, तो भी ना हुई तुमें सुध ॥१४॥

अब ढील ना कीजे एक पल, इत नाहीं बैठन का लाग[२] ।
एक पलक के कोटमें हिसे, हो जासी बड़ा अभाग[३] ॥१५॥

कहूं गुसा कर वचन, सो ना वले मेरी जुबांए ।
पर इत नफा क्या होएसी, तुम रहे माया लगाए ॥१६॥

टेढ़े सुकन तुमे कहूं, सो काट करूं जुबां दूर ।
पर इन मायाका तुमको, कहा होसी रोसन नूर ॥१७॥

ना पेहेचाने इन उजाले, ए दोए साख पूरन ।
पीछे पिउ आगे वतन में, क्यों होसी मुख रोसन ॥१८॥

पेहेले नजरों देखते, गयो अवसर टूटी आस ।
निकस गए जब हाथ से, तब आपन भए निरास ॥१९॥

ए ठौर ऐसा विखम[४], नास होए मिने खिन ।
स्याने हो तुम साथजी, सब चतुर वचिखिन[५] ॥२०॥

१. प्यार । २. अवसर । ३. दुर्भाग्य । ४. कठिन । ५. प्रवीण ।

तुम स्याने मेरे साथजी, जिन रहो विखे रस लाग ।
पांउ पकड़ कहे इंद्रावती, उठ खड़े रहो जाग ॥२१॥

॥प्रकरण॥१७॥चौपाई॥३६२॥

श्री धनीजी के लागूं पाए[1], मेरे पिउजी फेरा सुफल हो जाए ।
ज्यों पिउ ओलखाए मेरे पिउजी, सुनियो हो प्यारे मेरी विनती ॥१॥

मैं पेहेले ना पेहेचाने श्री राज, मोहे आड़ी भई माया की लाज ।
भवसागर की किने पाई न किनार, सो तुम सेहेजे उतारे पार ॥२॥

तुम अपनी जान दया कर, धनी लेवे त्यों लई खबर ।
माया गम सास्त्रों मांहें, सो त्रिगुन भी समझत नाहें ॥३॥

सो तारतम केहे करी रोसन, और देवाई साख सास्त्रों वचन ।
हम मांग लई जो माया, सो पेहेचान के खेल देखाया ॥४॥

उमेद करी जो सैयन, सो इत आए करी पूरन ।
तुम उमेद करते मने किए, तो भी खेल देखाए सुख दिए ॥५॥

हमको खेल देखन की लागी रढ[2], सो इत आए देखाई कर मन द्रढ ।
तुम हमको खेल देखावन काज, हमसों आगे आए श्री राज ॥६॥

तुम बिना लाड़ पूरन कौन करे, इन माया में दूजी बेर देह कौन धरे ।
तुम मोसों गुन किए अनेक, सो चुभे मेरे हिरदे में लेख ॥७॥

तुम पर वार डारूं जीवसो देह, तुम किए मोसों अधिक सनेह ।
मैं वारने लेऊं तुम पर, मैं सुरखरू[3] होऊंगी क्यों कर ॥८॥

तुम हो हमारे धनी, तो पूरी आसा लाख गुनी ।
इंद्रावती चरनों लागे, कृपा करो तो जागी जागे ॥९॥

॥प्रकरण॥१८॥चौपाई॥३७१॥

अखंड दंडवत करूं परनाम, हैड़े भीड़के भानूं हाम[4] ।
प्रेमें देऊं प्रदखिना[5], बेर बेर अनेक अति घना ॥१॥

१. चरण । २. रटन । ३. सम्मानित । ४. चाहना । ५. परिकरमा ।

बल बल जाऊं मुखारके बिंद, वरनन करूं सरूप सनंध ।
वारने जाऊं नैंनों पर, देखत हो सीतल द्रष्ट कर ।।२।।
वारने ऊपर लेऊं वारने, सुख दिए मोको अति घने ।
बेर बेर मैं लागूं पाए, सेवा करूं हिरदे चित ल्याए ।।३।।
वार फेर डारूं मेरी देह, इंद्रावती कहे अधिक सनेह ।
बोहोत अस्तुत मैं जाए ना कही, अपने घर की बात जो भई ।।४।।
अपनी बड़ाई आप मुख होए, ताको मूरख कहे सब कोए ।
पर जैसी बात तैसा बरनन, करसी विचार चतुर अति घन ।।५।।
वचन धनी के कहे परवान[१], प्रगट लीला होसी निरवान ।
चौदे भवन का कहिए सूर, रास प्रकास उदे हुआ नूर ।।६।।
चौदे भवन में जोत न समाए, ए नूर किरना किने पकड़ी न जाए ।
सब्दातीत ब्रह्मांड किए प्रकास, देखसी साथ एह उजास ।।७।।
प्रकास के वचन निरधार, वचन सब करसी विचार ।
आगे बड़ो होसी विस्तार, अखंड सब होसी संसार ।।८।।
इन लीला को करसी विचार, क्या करसी ताको संसार ।
प्रगट नीउ बांधी है एह, बड़ी इमारत होसी जेह ।।९।।
सुनो वचन ब्रह्मसृष्टी जाग, इंद्रावती कहे चरनों लाग ।
ए बानी मेरे धनिऐं कही, फेर फेर तुमको कृपा भई ॥१०॥
ऐसा पकव[२] प्रवीन[३] ना कछू हूं, तो सिखापन तुमको क्यों देऊं ।
मैं मन में यों जान्या सही, जीव अपना समझाऊं रही ॥११॥
पर साथ ऊपर दया अति घनी, फेर फेर कृपा करत हैं धनी ।
तो वचन तुमको कहे जांए, ना तो चींटी मुख कुम्हड़ा न समाए ॥१२॥
जिन तुम वचन विसारो एक, कारन साथ कहे विसेक ।
वचन कहे हैं कीजो त्यों, आपन पेहेले पांउ भरे हैं ज्यों ॥१३॥

१. माफक । २. पक्का । ३. बुद्धिमान ।

फेर अवसर आयो है हाथ, चरने लाग केहेती हूं साथ ।
अब चरने लागूं धनी चितधरी, तुम खबर मेरी भली बिध करी ॥१४॥

ए माया बोहोत जोरावर हती, दूर करी मेरे प्राणपति ।
माया को तजारक[1] भई, तिन कारन ए विनती कही ॥१५॥

ए विनती सुनियो तुम सार, माया दुख पायो निरधार ।
ए माया बातें हैं अति घनी, मोहे मुखथें काढ़ी मेरे धनी ॥१६॥

तुमारे गुन की कहा कहूं बात, तुम लाड़ पूरे करके अपन्यात ।
पिउ ने अपनी जानी परवान, इंद्रावती चरने राखी निरवान ॥१७॥

श्री सुंदरबाई के चरन पसाए, मूल वचन हिरदे चढ़ आए ।
चरन फले निध आई एह, अब ना छोडूं चित चरन सनेह ॥१८॥

चरन तले कियो निवास, इंद्रावती गावे प्रकास ।
भान के भरम कियो उजास, पावे फल कारन विस्वास ॥१९॥

विस्वास करके दौड़े जे, तारतम को फल सोई ले ।
तिन कारन करों प्रकास, ब्रह्मसृष्टी पूरन करूं आस ॥२०॥

इंद्रावती धनी के पास, रास को कियो प्रकास ।
धनिऐं दई मोहे जाग्रत बुध, तो प्रकास करूं तारतम की निध ॥२१॥

॥प्रकरण॥१९॥चौपाई॥३९२॥

अस्तुत कर गुन फिराए हैं

अब करूं अस्तुत आधार, वल्लभ सुनो विनती ।
एते दिन मैं ना पेहेचाने, मोहे लेहेर माया जोर हुती ॥१॥

भानूं भरम मोह जो मूलको, लेऊं सो जीव जगाए ।
करूं अस्तुत पियाकी प्रगट, देऊं सो पट उड़ाए ॥२॥

सोभा पिउ की सब्दातीत, सो आवत नहीं जुबांए ।
जोगवाई[2] जेती इन अंग की, सो सब मूल प्रकृती मांहें ॥३॥

१. फिटकार । २. साधन ।

अब किन बिध करूं मैं अस्तुत, मेरे जीव को ना कछू बल ।
जीव जोगवाई सब अस्थिर की, क्यों बरनों सोभा नेहेचल[1] ।।४।।

पेहेले जीवों करी अस्तुत, भली भांत भगवान ।
पंडिताई चतुराई महाप्रवीनी, किव कर हिरदे आन ।।५।।

ए किव प्रवाही जब देखिए, तामे कोई कोई भारी वचन ।
ए तो देवें सोभा अचेत में, पर मोहे सालत है मन ।।६।।

बेसुध भए देवे एती सोभा, तो कहा करे कर पेहेचान ।
जो मुख वचन एक कहों प्रवाही, तो सुन्या नहीं निरवान ।।७।।

न कछू सुनिया वेद पुरान, न कछू किव चातुरी ।
एक दोए वचन सुने मुख धनी के, तिनसे सुध सब परी ।।८।।

सो भी ना सुन्या चित देयके, न तो जोर गया पूर चल ।
पर जो रे गुन आड़े माया के, ताथें ले न सकी बूंद जल ।।९।।

अब तिन गुन को कहा दीजे उपमा, धिक धिक पड़ो ए बुध ।
आगे तूं सिरदार सबन के, तें क्यों न लई ए निध ॥१०॥

अब जागी बुध कहूं मैं तोको, तूं है बुध को अवतार ।
कर निरने तूं माया ब्रह्म को, खोल तूं पार द्वार ॥११॥

और न कोई बुध मुझ जैसी, मैं ही बुध अवतार ।
धाम धनी ग्रहूं इन विध, और अखंड करूं संसार ॥१२॥

ए बुध रही हमारे आसरे, जो सब थें बड़ा अवतार ।
बुधजी बिना माया ब्रह्म को, कोई कर न सके निरवार ॥१३॥

सुन्य निराकार निरंजन, तिनके पार के पार ।
बानी गाऊं तित पोहोंच के, इन चरनों बुध बलिहार ॥१४॥

जो नहीं विष्णु महाविष्णु को, बुधजी पोहोंचे तित ।
मेरे हिरदे चरन धनी के, इने ए फल पाया इत ॥१५॥

१. निश्चित ।

ए सार पाए सुख उपजे, धंन धंन ए बुध अवतार ।
अबलों किन ब्रह्मांड में, किन खोल्या न ए दरबार ॥१६॥

लीला इन अवतार की, करसी सब अखंड ।
धंन धंन इन अवतार की, वानी गासी सब ब्रह्मांड ॥१७॥

अब कहूं तोको श्रवना, तोको धनिए कहे वचन ।
क्यों न लई बानी वचिखिन, फिट फिट भूंडे करन ॥१८॥

मेरे तो मुदा तुम ऊपर, लेना तुमारे जोर ।
धनिएं तो धन बोहोतक दिया, पर तें लिया न हरामखोर ॥१९॥

अब अपना तूं संभार श्रवना, हो वचिखिन वीर ।
वानी जो वल्लभ की, सो लीजो द्रढ़ कर धीर ॥२०॥

श्रवना कहे सुने मैं नीके, विध विध के वचन ।
पूरी पिउ ने आस हमारी, उपज्यो आनंद घन ॥२१॥

अब वचन लेऊं सब सार के, भी यों कहे श्रवन ।
इन बिध बानी ग्रहूं मैं प्यारी,ज्यों सब कोई कहे धंन धंन ॥२२॥

बेसुध नींद कहूं मैं तोको, तूं निठुर नीच निरधार ।
हुई तूं सब गुन के आड़े, ना लेने दई निध आधार ॥२३॥

तूं तो माया रूप पापनी, तें डबोई ले कर बाथ ।
तें श्रवना को सुनने ना दिया, आलस जम्हाई तेरे साथ ॥२४॥

अनेक अंधेर दई तें जीव को, ज्यों मीन बांधे मांहें जाल ।
जिन नैनों निध निरखूं निरमल, तिन नैनों आड़ी भई पाल ॥२५॥

फिट फिट भूंडी दुष्ट पापनी, तोको दई अनेक धिकार ।
पेहेले अवसर गमाईया, अब नीके निरखो भरतार ॥२६॥

तूं करत मृतक समान, ऐसी निपट निखर ।
अब तूं आओ आड़ी माया के, ज्यों निरखूं धनी निज घर ॥२७॥

नींद कहे आतम जब जागी, तब क्यों रह्यो मैं जाए ।
नींद कहे मैं जात हों, लागूं तुमारे पाए ॥२८॥

अब आई तूं अरुचड़ी, जब मिले मोहे श्री राज ।
ऐसी अंधी अकरमन, तूं सरजी किस काज ॥२९॥

फिट फिट भूंडी तें भुलाई, अब कर कछू बल ।
आतम दृष्ट जुड़ी परआतम, हो माया मांहें नेहेचल ॥३०॥

अरूचड़ी कहे मैं बलवंती, मोको न जाने कोए ।
छानी होए के बैठूं जीव में, भानूं सो साजा न होए ॥३१॥

धनी अपना जब आप संभारे, तब चोरी करे क्यों चोर ।
अब उलटाए करूं मैं सीधा, बैठों माया में जोर ॥३२॥

तलबे[1] सेवा करूं सब अंगों, मोहे मिले धनी एकांत ।
तिन समें आए बैठी अंग में, फिट फिट भूंडी स्वांत ॥३३॥

धनी मिले स्वांत न कीजे, क्यों बैठिए करार ।
जाग दौड़ कीजे सब अंगों, स्वांत कीजे संसार ॥३४॥

स्वांत कहे मैं तबलो थी, जोलो नींद हुती आतम ।
अब मैं बैठी तरफ माया के, विलसो अपना खसम ॥३५॥

अब कहूं तोको लोभ लालची, फिट फिट मूरख अजान ।
लोभ न लाग्या चरन धनी के, जासों पाईए घर निरवान[2] ॥३६॥

अब जिन जाओ तरफ माया के, मेरे लोभ लालच दोऊ जोड़ ।
जोर पकड़ो दोऊ पाउं पिउ के, करो रात दिन दौड़ ॥३७॥

कहे लोभ लालच क्या गुनाह हमारा, जोलो जीव ना करे खबर ।
अब तुम पिउ देखाया हमको, तो देखो पिउ ग्रहें द्रढ़ कर ॥३८॥

भट परो तृष्णा कहूं तोको, तूं निपट निठुर निरधार ।
और सबे गुन तृपत[3] होवें, पर तो में कोई भूख भंडार ॥३९॥

१. चाह से । २. मुक्त सुख । ३. संतुष्ट ।

अब तोको क्यों काढ़ूं रे तृष्णा, तोसों बड़ा मोहे काम ।
तृष्णा लाग तूं पूरन पिउसों, ज्यों बस करूं धनी श्रीधाम ॥४०॥

तृष्णा कहे मैं क्योंए ना छोड़ूं, जो आतमाऐ देखाया आधार ।
तुम जाए गुन और फिराओ, मैं छोड़ूं नहीं निरधार ॥४१॥

मूरख मोह कहूं मैं तोको, जब आतम धनी घर आया ।
इन अवसर तूं चूक्या चंडाल, जाए बैठा मांहें माया ॥४२॥

अब आओ तूं वालाजी में, मायासों कर बिछोह[1] ।
देखूं जोर करे तूं कैसा, सांचे सिपाही मेरे मोह ॥४३॥

बात बड़ी कहे मोह मेरी, मोको जाने प्रेमी सोए ।
मैं बैठत हों जित आए के, तितथें उठाए न सके कोए ॥४४॥

जो तुम धनी देखाया मोको, होए लागूं मूरख मूढ़ अंध ।
एकै विध है मेरी ऐसी, और न जानूं सनंध[2] ॥४५॥

हरख सोक तुम भए माया के, धिक धिक तुमको अजान ।
आए धनी हरख न आया, चले सोक न आया निदान[3] ॥४६॥

हरख सोक कहे हम निठुर, भए सो अंध अभागी ।
धनी बिगर करे कहा हम, जोलों जीव न कहे जागी ॥४७॥

अब तुम आओ नेहेचल सुख में, जिन भूलो अवसर ।
माया में लाहा लेऊं धनी का, हरख ले जागो घर ॥४८॥

हरख कहे मैं क्या करों, जो जीव को नहीं खबर ।
सोक कहे न पेहेचान पिउ की, तो बिछुरे जाने क्योंकर ॥४९॥

हरख सोक कहे हम बलिऐ, दोऊ जोधा बड़े जोरावर ।
अब पेहेचान करी तुम पिउ की, अब क्योंऐ न भूलों अवसर ॥५०॥

फिट फिट जोधा जोरावर तुमको, मद मत्सर अहंकार ।
तुम अंतराय करी धनीसों, दौड़ करी संसार ॥५१॥

१. जुदागी । २. प्रकार । ३. अंत ।

तुम तीनों जोधा भए क्यों उलटे, भए माया के दास ।
जब जीवनजीं मिले जीवको, तब क्यों न कियो उलास ॥५२॥

अब तुम संगी हूजो मेरे, धनिऐं कियो मोसों मिलाप ।
सिर ल्यो सोभा धनी धामकी, दूर हो मायाथें आप ॥५३॥

तीनों जोधा बड़े जोरावर, हम तीनों की राह एक ।
धनी आतम से क्यों ए न छूटे, जो पड़े विघन अनेक ॥५४॥

सेहेजे सुभाव फिट फिट तुमको, ऐसे सूर सुभट ।
सांचे तुम हुए मायासों, मोसों मिले कपट ॥५५॥

मूरख मूढ़ करी तुम दुष्टाई, हुए नहीं स्वाम धरमी ।
मूरख मूढ़ करी तुम ऐसी, धिक धिक चंडाल अकरमी ॥५६॥

जोधा दोऊ जोरावर मेरे, तुम तरफ हो जिनकी ।
अनेक उपाय करे जो कोई, पर जीत होए तिनकी ॥५७॥

अब तुमको कहूं खीज के, तुम हूजो सावधान ।
प्रेमें पिउ रूदे लपटाओ, जिन करो किन की कान[1] ॥५८॥

सेहेजे सुभाव दोऊ हम बलिए, कोई करे जो कोट उपाए ।
पकड़ें बात जो हम सांची, सो लोपी[2] किनहूं न जाए ॥५९॥

अब देखियो जीव जोर हमारा, पिउ पकड़ देवें एकांत ।
पूरा पास देऊं रंग लाखी, सो क्योंए ना उचटे भांत ॥६०॥

ममता तूं भई माया की, हलाक किए हैरान ।
फिट फिट भूंड़ी चंडालन, तें बड़ी करी मोहे हान ॥६१॥

अब ममता आओ मेरे पिउ में, तोको पेहेले दई धिकार ।
अब संघातन[3] हूजो मेरी, मोहे मिले पिउ सिरदार ॥६२॥

अब मैं चेरी हुई तुमारी, ले देऊं सांची निध ।
अब के ए निध क्योंए ना छूटे, करो कारज तुम सिध ॥६३॥

१. परवाह, जरुरत । २. छिपाना - उलटाना । ३. साथी, संगिनी ।

अब फिटकार देऊं कल्पना, उलटी तूं अकरमन ।
फिराए खाली करी फजीत, आतम को अति घन ॥६४॥

अब करमन तूं हो कल्पना, कर सेवा मांहें विचार ।
धाम धनी मोहे मिले माया में, लाभ लेऊं मांहें संसार ॥६५॥

कहे कल्पना ए काम मेरा, करूं नए नए अंग उतपन ।
बिध बिध की सेवा देखाऊं, धनी विलसो होए धंन धंन ॥६६॥

वैर राग तुम दोऊ जोधा, सूर साम सामे सिरदार ।
वैर किया तुम वल्लभजीसों, राग किया संसार ॥६७॥

बुरी करी तुम अति मोसों, अब मारूं जमधर घाव ।
अब अवसर फेर आयो मेरे, जो भुलाए दियो तुम दाव ॥६८॥

तुम पर मेरे है मुद्दार, ऐसी पीठ क्यों दीजे ।
आतम संग मिलाए धनीजी, धंन धंन मोहे कीजे ॥६९॥

जुध करो तुम दोऊ जोधा, राग आओ धनी धाम पाया ।
बिध बिध वैर कर कठनाई, जाए बैठो मांहें माया ॥७०॥

वैर राग कहे क्या गुनाह हमारा, जो जीव न राखे घर ।
जो न देखावे धनी विवेकें, तो हम पकड़ें क्यों कर ॥७१॥

राग कहे मैं भली भांते, पिउजीसों करों रस रीत ।
जीव धनी बीच अंतर टालू, गुन देऊं सारे जीत ॥७२॥

वैर कहे देखियो बिध मेरी, संग ना आवे संसार ।
कोई गुन जीवसों करे लड़ाई, तो मोको दीजो धिकार ॥७३॥

धिक धिक स्वाद कहूं मैं तोको, मोहे मिल्या था मीठा जीवन ।
सो ए स्वाद छोड़ अभागी, जाए पड़या संसार विघन ॥७४॥

अब तूं स्वाद हो सोहागी, ले धनी की मिठास ।
इन रंग रस आयो जब स्वाद, तब जेहेर होसी सब नास ॥७५॥

स्वाद कहे जब ए सुख आया, तब अभख[1] हुआ मोहजल ।
झूठा रंग सब उड़ गया, रस रंग भया नेहेचल ॥७६॥

फिट फिट भूंडे दुष्ट अभागी, मोहे करायो धनीसों ब्रोध ।
मैं जान्या था सखा मेरा, पर तें कमल[2] फिराया क्रोध ॥७७॥

आया नहीं माया के आड़े, तें किया न मेरा काम ।
अवसर आए चूक्या चंडाल, रेहे गई हैड़े में हाम ॥७८॥

अब क्रोध तूं कमल फिराओ, उलटाए दे संसार ।
जोधा जोरावर अब क्या देखे, कर दे जय जय कार ॥७९॥

क्रोध कहे मैं अति बलवंता, पर क्या करूं धनी बिन ।
अब उलटाए देऊं कर सीधा, फेर कबहूं ना होवे दुस्मन ॥८०॥

अब तोको कहूं चाक चकरड़ा, तूं चढ़ बैठा जीव के सिर ।
तें खाली ऐसा फिराया, रेहे ना सके क्योंऐ थिर ॥८१॥

अंध अभागी क्यों हुआ ऐसा, तें क्या सुने न धनी के वचन ।
धनी मिले तूं थिर ना हुआ, फिट फिट भूंडे मन ॥८२॥

समरथ मन तूं बड़ा जोरावर, क्या कहूं तेरो विस्तार ।
तुझ में फैल[3] बिध बिध के, अलेखे अपार ॥८३॥

तोसों तो काम बड़ा है मेरा, मद मस्त मेवार[4] ।
फिर तूं पख पचीस मांहें, बलवंता बेसुमार ॥८४॥

संकल्प विकल्प है तुझमें, सेवा कर धनी धाम ।
उमंग अंग आन निसवासर[5], कर पूरन मन काम ॥८५॥

बात बड़ी कहे मन मेरी, मैं सकल विध जानों ।
मूल बिना करूं सिरदारी, जीव को भी बस आनों ॥८६॥

जोलों जीव जागे नहीं, तोलों कहा करें हम ।
जोर हमारा तबहीं चले, जब जाग बैठो तुम ॥८७॥

१. न खाने योग्य । २. चक्र । ३. तरीके, आचरण । ४. मन, (गुण - अंग इंद्रियों का नायक) । ५. दिन रात ।

अब तुम बिध मेरी देखियो, सब बिध करूं रोसन ।
धाम धनी आन देऊं अंगमें, तो कहियो सिरदार सबन ॥८८॥

कोई जो कदर जाने मेरी, अंग अंदर आनूं वतन ।
अनेक विध सेवा उपजाऊं, धनी न्यारे न होवे खिन ॥८९॥

बुरी करी तुम भरम भ्रांतड़ी, यों न करे दूजा कोए ।
तारतम जोत उद्दोत के आगे, संसे कबूं ना होए ॥९०॥

संसे भ्रांत के आकार, जो कदी होते तुमारे ।
टूक टूक करूं मैं तिल तिल, फेर फेर तीखी तरवारे ॥९१॥

अब जोर कर जाओ माया में, इनके संग होए तुम ।
उजाले तारतम के पेहेचान, ज्यों मूल सरूप देखें हम ॥९२॥

अंतर भ्रांत कहे तुम फेर फेर, मार मार देखाओ डर ।
नींद कर बैठे इन जिमी में, सो आप न करो खबर ॥९३॥

घर का धनी अखंड फल पावे, सो इत क्यों सोवे करारे ।
गफलत को न छोड़े आपे, फेर फेर हमको मारे ॥९४॥

अब इन तारतम के उजाले, करूं तारतम रोसन ।
नेहेचल सुख लेओ तुम सांचे, और भी देऊँ सबन ॥९५॥

फिट फिट लज्या तूं भई लौकिक, बांधे कबीले सों करम ।
धनी मेरे मोहे आए बुलावन, तित तोहे न आई सरम ॥९६॥

कहा कियो तें दुष्ट पापनी, ऐसी न करे कोए ।
घर धाम धनी के आगे, करी सरमिंदी मोहे ॥९७॥

अब सरमिंदी कहूं मैं तोको, तूं देख परआतम सगाई ।
बड़ा अवसर पेहेले तूं चूकी, अब फेर आई जोगवाई ॥९८॥

कहे लज्या मैं पेहेले भूली, अवसर धनी ना छोडूं ।
सिर माया का भान के, पिउसों मुख ना मोडूं ॥९९॥

फिट फिट आसा तूं भई माया की, बैठी मोहजल में आए ।
मैं माया में अखंड फल पाया, सो मोहे दियो हराए ॥१००॥

अखंड धनी फल छोड़ के, निरफल माया झूठ लई ।
ए सिर गुनाह हुआ जीव के, तोको सिखापन ना दई ॥१०१॥

कहे आसा मोहे दई जगाए, निकट न जाऊं मोहजल ।
इन बल मांहें कमी न राखूं, लागी आतम आसा सुफल ॥१०२॥

गुन गरीबन आई अकरमन, ना भई सनमुख सावधान ।
लाहा लीजे दौड़ धनी का, सो दिया गरीबी भान ॥१०३॥

किन बिध कहूं या सुख की, फिट फिट भूंडे अचेत ।
तुझ बैठे न आई तीव्रता, ना तो ए सुख लेत ॥१०४॥

कहे गरीबी मैं माया की, मैं बैठों माया मांहें ।
लीजो लाहा सुख नेहेचल का, श्री धाम धनी हैं जांहें ॥१०५॥

फिट फिट भूंडी न आई तीव्रता, मोहे मिले थे धाम धनी ।
ऐसा विलास खोया तें मेरा, बोहोत बुरी करी घनी ॥१०६॥

फेर अवसर आयो है मेरे, चित चेतन कीजे बल ।
रात दिन जगाए जीव को, जिन दे मिलने पल ॥१०७॥

तुझमें बल है सावचेती, चित चेतन अति रोसन ।
परआतम बस कर दे आतमां, ना होए अंतराए एक खिन ॥१०८॥

सील संतोख आओ ढिग मेरे, बांधो सागर आड़ी पाल ।
गुन सारे हुए अग्या में, पीछे रह्या न कछू जंजाल ॥१०९॥

सील कहे संतोख सुनो, आपन हुए माया के पाल ।
कई बहावे पहाड़ पूर सागर के, मांहें लेहेरें बेहेवट नि ताल ॥११०॥

भमरियां मांहें बेसुमार, लेहेरां मेर समान ।
मछ लड़े बड़े मोहजल के, करनी पाल इस ठाम ॥१११॥

अब बांधनी पाल[१] खरी[२] करनी, ज्यों ना खसे[३] लगार ।
पीछे[४] जल जोर बढ़ा ऊपर अपने, तब सामी सोभा होसी अपार ॥११२॥

एह पाल हम बांधी जीवजी, पर तुम जाग करो सावचेत[५] ।
फेर नहीं आवे ऐसा समया, सोभा ल्यो साथ में इत ॥११३॥

जाग जीव तूं जोरावर, क्या देऊं तोको गारी ।
तें होए चंडाल अवसर खोया, जीती बाजी हारी ॥११४॥

कठनाई मैं देखी तेरी, तूं निठुर निपट अपार ।
थके धनी तोहे धम धमके, पर तें गल्या नहीं निरधार ॥११५॥

॥प्रकरण॥२०॥चौपाई॥५०७॥

जीव को सिखापन

सुन मेरे जीव कहूं वृतांत, तोको एक देऊं द्रष्टांत ।
सो तूं सुनियो एकै चित, तोसों कहत हों करके हित ॥१॥

परीछितें यों पूछ्यो प्रस्न, सुकजी मोको कहो वचन ।
चौदे भवन में बड़ा जोए, मोको उत्तर दीजे सोए ॥२॥

तब सुकजी यों बोले प्रमान, लीजो वचन उत्तम कर जान ।
चौदे भवन में बड़ा सोए, बड़ी मत का धनी जोए ॥३॥

भी राजाऐं पूछा यों, बड़ी मत सो जानिए क्यों ।
बड़ी मत को कहूं विचार, लीजो राजा सबको सार ॥४॥

बड़ी मत सो कहिए ताए, श्री कृष्णजी सों प्रेम उपजाए ।
मत की मत तो ए है सार, और मत को कहूं विचार ॥५॥

बिना श्री कृष्णजी जेती मत, सो तूं जानियो सबे कुमत ।
कुमत सो कहिए किनको, सबथें बुरी जानिए तिनको ॥६॥

ऐसो तिन को कहा वृतांत, सो भी राजा तोको कहूं द्रष्टांत ।
सुन राजा कहूं सो जुगत, जासों पेहेचान होवे दोऊ मत ॥७॥

१. मेड । २. अच्छी तरह से (भली भांति) । ३. खिसकना, हिलना - डुलना । ४. पीछे धकेलना (खदेडना) । ५. सतर्क होना ।

श्री कृष्णजी सों प्रेम करे बड़ी मत, सो पोहोंचावे अखंड घर जित ।
ताए आड़ो न आवे भवसागर, सो अखंड सुख पावे निज घर ।।८।।

ए सुख या मुख कह्यो न जाए, याको अनुभवी जाने ताए ।
ए कुमत कहिए तिनसे कहा होए, अंधकूप में पड़िया सोए ।।९।।

सब दुखों में बुरा ए दुख, कुमत करे धनीसों बेमुख ।
केतो कहूं या दुख को विस्तार, जाके उलटे अंग इंद्री विकार ॥१०॥

दोऊ मत को कह्यो प्रकार, ए ब्रह्मसृष्टी करें विचार ।
जाको जाग्रत है बड़ी बुध, चेते अवसर जाके हिरदे सुध ॥११॥

ए सुकजी के कहे वचन, नीके फिकर कर देखो मन ।
बोहोत फिकर की नहीं ए बात, ए समया हाथ ताली दिए जात ॥१२॥

तेरी गिनती बांधी स्वांसों स्वांस, तिनको भी नाहीं विस्वास ।
केते रहे बाकी तेरे स्वांस, एक स्वांस की भी नाहीं आस ॥१३॥

स्वांस तो खिन में कई आवें जांए, गए अवसर पीछे कछू न बसाए ।
तिन कारन सुन रे जीव सही, बड़ी मत मैं तोको कही ॥१४॥

जो जोगवाई[1] है तेरे हाथ, सो या मुखथें कही न जात ।
एते दिन तें ना करी पेहेचान, तैसी करी ज्यों करे अजान ॥१५॥

अब ए वचन विचारो मन, साख दई सुकजी के वचन ।
भी वचन कहूं सुन मेरे जिउ, जिन छोड़े चरन खिन पिउ ॥१६॥

निज घर पिउ को लीजे प्रकास, ज्यों वृथा न जाय एक स्वांस ।
ग्रह गुन इंद्री भर तूं पांओ, ऐसा फेर न पाईए दाओ ॥१७॥

भरम भान के कहे वचन, बड़ी मत ले ज्यों होए धंन धंन ।
ए भरम की नींद उड़ाए के दे, पेहेचान पिउ की नीके कर ले ॥१८॥

मुखथें वचन कहे तो कहा, जो छेद के अजूं ना निकस्या ।
अगलों ने किव करी अनेक, तें भी कछुक करी विसेक ॥१९॥

१. साधन ।

पर सांचा तो जो होए गलतान, तो भले मुख निकसी ए बान ।
ए बानी मेरी नाहीं यों, और किव करत हैं ज्यों ॥२०॥

ए गुसा किया मेरे जीव के सिर, ना तो और किवकी भांत कहूं क्यों कर ।
आतम मेरी है अति सुजान,अछरातीत निध करी पेहेचान ॥२१॥

अब सांचा तो जो करे रोसन, जोत पोहोंची जाए चौदे भवन ।
ए समया तो ऐसा मिल्या आए, चौदे भवन में जोत न समाए ॥२२॥

यों हम ना करे तो और कौन करे, धनी हमारे कारन दूजा देह धरे ।
आतम मेरी निज धाम की सत, सो क्यों ना करे उजाला अत ॥२३॥

श्री सुंदरबाई के चरन प्रताप, प्रगट कियो मैं अपनों आप ।
मोंसों गुनवंती बाईऐं किए गुन, साथें भी किए अति घन ॥२४॥

जोत करूं धनी की दया, ए अंदर आए के कह्या ।
उड़ाए दियो सबको अंधेर, काढ़्यो सबको उलटो फेर ॥२५॥

इंद्रावती प्रगट भई पिउ पास, एक भई करे प्रकास ।
अखंड धाम धनी उजास, जाग जागनी खेलें रास ॥२६॥

॥प्रकरण॥२१॥चौपाई॥५३३॥

आंखां खोल तूं आप अपनी, निरख धनी श्रीधाम ।
ले खुसवास याद कर, बांध गोली प्रेम काम ॥१॥

प्रेम प्याला भर भर पीऊं, त्रैलोकी छाक छकाऊं ।
चौदे भवन में करूं उजाला, फोड़ ब्रह्मांड पिउ पास जाऊं ॥२॥

वाचा मुख बोले तूं वानी, कीजो हांस विलास ।
श्रवना तूं संभार आपनी, सुन धनी को प्रकास ॥३॥

कहे विचार जीव के अंग, तुम धनी देखाया जेह ।
जो कदी ब्रह्मांड प्रले होवे, तो भी ना छोडूं पिउ नेह ॥४॥

खोल आंखां तूं हो सावचेत, पेहेचान पिउ चित ल्याए ।
ले गुन तूं हो सनमुख, देख परदा उड़ाए ।।५।।

एते दिन वृथा गमाए, किया अधम का काम ।
करम चंडालन हुई मैं ऐसी, ना पेहेचाने धनी श्रीधाम ।।६।।

भट परो मेरे जीव अभागी, भट परो चतुराई ।
भट परो मेरे गुन प्रकृती, जिन बूझी ना मूल सगाई ।।७।।

आग पड़ो तिन तेज बल को, आग पड़ो रूप रंग ।
धिक धिक पड़ो तिन ग्यान को, जिन पाया नही प्रसंग ।।८।।

धिक धिक पड़ो मेरी पांचो इंद्री, धिक धिक पड़ो मेरी देह ।
श्री स्याम सुंदरवर छोड़ के, संसार सों कियो सनेह ।।९।।

धिक धिक पड़ो मेरे सब अंगों, जो न आए धनी के काम ।
बिना पेहेचाने डारे उलटे, ना पाए धनी श्री धाम ॥१०॥

तुम तुमारे गुन ना छोड़े, मैं बोहोत करी दुष्टाई ।
मैं तो करम किए अति नीचे, पर तुम राखी मूल सगाई ॥११॥

।।प्रकरण।।२२।।चौपाई।।५४४।।

वारने जाऊं वनराए वल्लभ की, जाकी सुख सीतल छाया ।
देखो ए बन गुन भव औखदी, देखे दूर जाए माया ।।१।।

जाऊं वारने आंगने बेलूं, जित ले बैठो संझा समे साथ ।
बातें होत चलने धाम की, घर पैंड़ा देखाया प्राणनाथ ।।२।।

भी बल जाऊं आंगने, आगे पीछे सब साज ।
जहां बैठो उठो पांउ धरो, धनी मेरे श्री राज ।।३।।

बलिहारी जाऊं बोहोत बेर, देहरी मंदिर द्वार ।
वारने जाऊं इन जिमी के, जहां बसत मेरे आधार ।।४।।

बलि जाऊं पाटी पलंग सिराने, चादर सिरख[१] तलाई ।
पौढ़त पिउजी ओढ़त पिछौरी, ऊपर चंद्रवा चटकाई[२] ।।५।।

बल बल जाऊं मैं दुलीचा चाकला, बल जाऊं मंदिर के थंभ ।
जिन थंभों कर[३] धनी अपने, जुगतें दिए बंध ।।६।।

बैठत हो जित महाबलिया, बल बल जाऊं ठौर तिन ।
साथ सबेरा[४] आए के बैठत, करो धाम धनी बरनन ।।७।।

देखत मंदिर में कई बिध, वस्त सकल पूरन ।
टूक टूक कर वार डारों, मेरे जीव के और तन ।।८।।

भले तुम देह धरी मुझ कारन, कर रोसन टाल्यो भरम ।
जीव मेरा बोहोत सखत था, मेहेर नजरों भया नरम ।।९।।

बल जाऊं मैं चरन कमल की, बल जाऊं मीठे मुख ।
बलिहारी सोभा सुंदरता, जिन दरसन उपजत सुख ॥१०॥

भी बल जाऊं हस्त कमल की, बल जाऊं वस्तर ।
लेऊं बलैयां भूखन की, बल जाऊं सीतल नजर ॥११॥

वार डारूं मैं नासिका पर, और वार डारूं श्रवन ।
वार डारूं मैं नख सिख पर, जो सनकूल हैं अति घन ॥१२॥

सेवा करत बाई हीरबाई, उछव रसोई जित ।
अंतरगत तुम नित आरोगो, मैं बल बल जाऊं तित ॥१३॥

वार डारूं मैं वानी पर, जो वचन केहेत रसाल ।
साथ को चरने राख के, सागर आड़ी बांधत हो पाल ॥१४॥

करत हो कृपा कई विध की, मीठी अति मेहेरबानी ।
सांचे लाड़ लड़ाए सुंदर, ल्याए वतन की वानी ॥१५॥

मैं सेवा करूं सर्वा अंगो, देऊं प्रदखिना[५] रात दिन ।
पल न वालूं निरखूं नेत्रे, आतम लगाए लगन ॥१६॥

१. रजाई । २. बंधा हुआ । ३. हाथ । ४. प्रातःकाल (सुबह - सवेरे) । ५. परिकरमा ।

मुझसे अजान अबूझ[१] दुष्ट अप्रीछक[२], अधम नीच मत हीन ।
सो इन चरनो आए होए दाना[३] स्याना[४], सुघड़ सुबुध प्रवीन ॥१७॥

जीव जगाए देत निध निरमल, करत आतम रोसन ।
सो जीव बुध ले करे उजाला, सबमें चौदे भवन ॥१८॥

इन जुबां क्यों कहूं बड़ाई, तुमें सब्द ना पोहोंचे कोए ।
जो कछू कहूं सो उरे रहे, ताथे दुख लागत है मोहे ॥१९॥

दाझ बुझत है एक सब्द में, जब कहूं धनी श्रीधाम ।
इन वचनें आतम सुख पायो, भागी हैड़े की हाम ॥२०॥

कहे इंद्रावती अति उछरंगे, फोड़ ब्रह्मांड करूं रोसन ।
सीधी राह देखाऊं जाहेर, ज्यों साथ सुखे आवे वतन ॥२१॥

॥प्रकरण॥२३॥चौपाई॥५६५॥

अब अस्तुत ऊपर एक विनती कहूं, चरन तुमारे जीव में ग्रहूं ।
इन चरनों मोहे सुध भई, पेहेली निध श्री सुंदरबाईऐं दई ॥१॥

दोऊ सरूप में जोत जो एक, सो मैं देख्या कर विवेक ।
ए चरन फलें कहे इंद्रावती, तारतम जोत करूं विनती ॥२॥

मेरा बुत्ता कछू न था मेरे धनी, मोपे दोऊ सरूपों दया करी अति घनी ।
सेवा में न थी हाजर, न जानूं दया करी क्यों कर ॥३॥

करतब चितवनी और सेवा करे, माया गुन उलटे परहरे ।
मनसा वाचा कर करमना, करे दौड़ प्यार अति घना ॥४॥

पर जब लग दया तुमारी न होए, तब लग काम न आवे कोए ।
ए परीछा[५] में करी निरधार, देखे सबके सब्द विचार ॥५॥

जीव खरा होए जुदा मन करे, कपट रत्ती न हिरदे धरे ।
यों करके तुमको सेवे, वचन विचार अंदर जीव लेवे ॥६॥

१. ना समझ । २. अनजान । ३. बुद्धिमान । ४. चतुर । ५. परीक्षा ।

सनकूल करे तुमारा चित, संसे भान करे जीव के हित ।
पिउ चित पर चलेगा जोए, साथ में घरों सोभा लेसी सोए ।।७।।

ए नींद उड़ाए के कहे वचन, श्री धाम धनी जीव जानी मन ।
जब देख्या धनी नीके फिकर कर, तो अजू न गई नींद है अंदर ।।८।।

ए वचन कहे मैं नींदज मांहें, जब नीके देखूं धनी धाम के तांहें ।
न तो क्यों कहूं धनी को एह वचन, पर कछुक तासीर[1] है भोम इन ।।९।।

जब घर की तरफ देखों तुमको, तब फेर यों होए मेरे मन को ।
ए धाम धनी को कहा कहे वचन, तब जीव विचार दुख पावे मन ॥१०॥

क्या कहूं सब्द तुमें पोहोंचे नांहें, मेरी जुबां भई माया अंग मांहें ।
तुम सब्दातीत भए मेरे पिउ, मेरी देह खड़ी माया ले जिउ ॥११॥

धनी लगते वचन कहूंगी आए धाम, तब भानूंगी मेरे जीव की हाम ।
ए तो वानी कही मैं साथ कारन, साथ छोड़सी माया ए देख वचन ॥१२॥

साथ वेगे बुलाओ कहे इंद्रावती, ए कठन माया दुख होए लागती ।
ए दुख देख्या मांहें दुस्तर, कोई न पेहेचाने आप न सूझे घर ॥१३॥

ए मैं लुगा कह्या माया सनमंध, मैं देखीतां न देखूं अंध ।
ए ताए कहिए जो होए बेसुध, तुम खिन खिन खबर लई कई विध ॥१४॥

एह कहूं मैं साथ कारन, अधखिन साथ विसारो जिन ।
जिन करो तुमारी पाओखिन, तो कई कल्पांत जाए मिने तिन ॥१५॥

मैं तो कहूं जो तुम न्यारे हो, पाओ पल साथ की जुदागी ना सहो ।
मैं तो कहूं जो मेरी ओछी मत, तुम हम को कई सुख चाहत ॥१६॥

हम कारन तुम आए देह धर, तुम कई विध दया करी हम पर ।
तुम धनी आए कारन हम, देखाई बाट ल्याए तारतम ॥१७॥

साथें माया मांगी सो भई अति जोर, तुम सब्द कहे कई कर कर सोर ।
पर तिन समे नींद क्योंए न जाए, तब धनी सरूप भए अंतराए ॥१८॥

१. प्रभाव - असर ।

तो भी ना भई हमको खबर, तब फेर आए दूजा देह धर ।
ततखिन मिले हमको आए, सागर वतनी नूर बरसाए ॥१९॥

मैं साथ को कह्या सो कहिए क्यों कर, यों तो कहिए जो दूर किए होवें घर ।
एता तो मैं जानूं जीव मांहें, जो ए अरज धनीसों करिए नांहें ॥२०॥

पर साथ वास्ते दाह उपजी मन, यों जानें न कह्या हम कारन ।
यों न कहूं तो समझे क्यों कोए, कई विध दया धनी की होए ॥२१॥

ए साथ की चिन्हार को कहे वचन, ना तो धनी दया जीव जाने मन ।
साथ चरने हैं सो तो वचिखिन[1] वीर, ए भी वचन विचारे द्रढ़ धीर ॥२२॥

पर करूं साथ पीछले की बड़ी जतन, देख वानी आवसी इन बाट वतन ।
देखियो साथ दया धनी, ए कृपा की बातें हैं अति घनी ॥२३॥

ए दया धनी मैं जानूं सही, पर इन जुबां ना जाए कही ।
जो जीव वचन विचारे प्रकास, तो अंग उपजे धाम धनी उलास ॥२४॥

कहे इंद्रावती सुंदरबाई चरनें, सेवा पिउ की प्यार अति घने ।
और कछू ना इन सेवा समान, जो दिल सनकूल[2] करे पेहेचान ॥२५॥

॥प्रकरण॥२४॥चौपाई॥५९०॥

जाटी प्रबोध-कातनी को द्रष्टांत

भट परो तिन नींद को, जिन सोहागनियां दैयां भुलाए ।
तो भी नींद निगोड़ी[3] ना उड़ी, जो धनी थके बुलाए बुलाए ॥१॥

ए नींद अमल कासों कहिए, क्योंए ना छोड़े आतम ।
तो भी बेसुधी ना टली, जो जल बल हुई भसम ॥२॥

वतन से आइयां सैयां, सबे बांध के होड़ ।
सो याद न रह्या कछुए, इन नींदे दैयां सब तोड़ ॥३॥

तुमको नींद उड़ावने, मैं देऊं एक द्रष्टांत ।
तुम विध अगली देखके, जो कदी समझो इन भांत ॥४॥

१. वचिक्षण । २. प्रसन्न । ३. बेहया ।

आइयां आस कातन की, करके उमेद दूनी ।
किनहूं कात्या बारीक, किन रूईथें न करी पूनी ।।५।।

आइयां कातन वालियां, मिनो मिने रब्द कर ।
किन किन मिहीं कातिया, सांचा सनेह धर ।।६।।

कोई बड़ाई ले बैठियां, सो गैयां आपको भूल ।
उठियां अंग पछताए के, होए सूरत बेसूल ।।७।।

किनहूं कात्या सोहाग का, सूत भर भर सेर ।
कोई बैठियां पांउ पसार के, ले बैठी हिरदे अंधेर ।।८।।

कोई तलबें तांत चढ़ावहीं, भले पाई ए बेर[१] ।
कोई नीचा सिर कर रही, कोई चढ़ियां सिर मेर ।।९।।

एक सूत देखे और के, उमर सब गई ।
फेरा देवें रूपवंतियां, कबूं पूनी हाथ न लई ॥१०॥

कोई सोए रहियां आतन में, उठियां तब उदमाद[२] ।
दुख पाया तब दिल में, जब सूत आया याद ॥११॥

जिन दिल दे मिहीं कातियां, ढ़ील न करी एक पल ।
सो ए उठी सैयन में, हंसते मुख उजल ॥१२॥

किनहूं ऊंचा[३] कातिया, दे फारी फुकार ।
सो ए घरों सैयनमें, हुई धंन धंन कातनहार ॥१३॥

जब सूत सैयां देखिया, तब जाहेर हुईयां सब कोए ।
पर जिन कछूए न कातिया, छिपाए रही मुख सोए ॥१४॥

सूतवाली सोहागनी, तिन सोभा पाई घनी ।
सैयां भी कहे धंन धंन, और दियो मान धनी ॥१५॥

एक फेरे चरखा उतावला[४], दिल बांध तांत के साथ ।
रातों भी करे उजागरा, सूत होवे तिनके हाथ ॥१६॥

१. अवसर । २. मद भरी । ३. कीमती । ४. जल्दी ।

करे जो बातां बीच में, सो तांत न निकसे तिन ।
पूनी रही तिन हाथ में, बैठी फिरावे मन ॥१७॥

फजर[1] हुई बीच सैयनमें, मिल बातां करसी सब ।
जिन कछुए न कातिया, तिन कहा हाल होसी तब ॥१८॥

ना कछू कात्या रात में, ना कछू कात्या दिन ।
सो वतन बीच सैयनमें, मुख नीचा होसी तिन ॥१९॥

जो मोटा या बारीक, तिन भी पाया मोल ।
पर जिन कछुए न कातिया, तिनका कछुए न सूल[2] ॥२०॥

हुकम धनी के बिध बिध, अनेक किए पुकार ।
जिन सुनी न तिनकी वतन में, बातें हुई बिकार[3] ॥२१॥

सुनते पुकार धनीय की, काल गया दिन ले ।
पीछे मुख नीचा होएसी, क्यों न कात्या चित दे ॥२२॥

जिनो आज न कातिया, करसी याद ए दिन ।
जब बातां करसी सोहागनी, मिलकर बीच वतन ॥२३॥

जो कछुए ना समझी, हाथ न लई पूनी ।
आई थी उमेद में, पर उठी अलूनी[4] ॥२४॥

एक लेसी सोहाग सुलतान का, सोई सोहागिन ।
सो बातां सिर उठाए के, करसी बीच सैयन ॥२५॥

॥प्रकरण॥२५॥चौपाई॥६१५॥

भट परो नींद मोह की, जो टाली न टले क्यों ।
आंखां खोल सीधा कहे, फेर वली त्यों की त्यों ॥१॥

एक तकला भाने ताओ में, फोकट फेरा खाए ।
झगड़ा लगावे आप में, हिरदे रस न जुबांए ॥२॥

१. प्रातः काल, ज्ञान । २. हाल, दशा । ३. व्यर्थ, बिगड़ा हुआ । ४. आलस भरी, मुरझाई हुई ।

एक तकले समारे और के, लर लर कतावे ।
कहे अपनायत जान के, समया बतावे ।।३।।

एक झगड़ा लगावे और को, सामी तकले डाले वल ।
ए बातें होसी वतन में, जब उतर जासी अमल ।।४।।

एक औरों को उलटावहीं, कहा बिध होसी तिन ।
कातना उन पीछा पड़या, सामी धके दिए औरन ।।५।।

जो झगड़ा लगावें आपमें, ताए होसी बड़ो पछताप ।
ओ जानें कोई ना देखहीं, पर धनी बैठे देखें आप ।।६।।

बात उठावें जो मन से, सो होसी सबे वतन ।
एक जरा छिपी ना रहे, यों कोई भूलो जिन ।।७।।

एक काते मांहें चुपकतियां, सो ताने सहे औरन ।
तांत चढ़ावे तलबें, नजर ना चूके खिन ।।८।।

ताए होसी मान धनीयको, साथ मिने रंग लाल ।
उठसी हंसती हरखमें, पाँउ दे पड़ताल ।।९।।

हाथ घससी हाथसो, जो लई इंद्रियों घेर ।
सो पछतासी आंखां खुले, पर ए समया न आवे फेर ॥१०॥

जो इत आंखा खोलसी, ले इस्क या विचार ।
सो करसी बातें बिध बिध की, सब सैयों में सिरदार ॥११॥

जिन इत आंखां ना खोलियां, करके बल बेसुमार ।
नींद उड़ाए ना सकी, सो ले उठसी खुमार[1] ॥१२॥

जिन इत उड़ाई नींदड़ी, सो उठत अंग रोसन ।
केहेसी कातनहार को, विध विध के वचन ॥१३॥

जो उठसी आंखां चोलती[2], सो केहेसी कहा वचन ।
ना तो आई थी उमेद देखने, पर नींद ना गई तिन ॥१४॥

१. बेहोसी । २. मलते हुए ।

सुनो सैयां कहे इंद्रावती, तुम आईयां उमेद कर ।
अब समझो क्यों न पुकारते, क्यों रहियां नींद पकर ॥१५॥

तुम वतन में धनीयसों, क्यों करसी बात अंधेर ।
रेहेसी उमेदां मन में, ए न आवे समया और बेर ॥१६॥

कातने को उतावलियां, आईयां मिलकर तुम ।
अब झूलो[1] रहियां नींद में, कातना भूल खसम ॥१७॥

धनी आए जगावहीं, कहे कहे अनेक सनंध ।
नींदें सब भुलाइयां, सेवा या सनमंध ॥१८॥

ए जिमी लगसी आग ज्यों, जब धनी चले घर ।
वचन पिउके लेयके, इत क्यों न जागो मांहें अवसर ॥१९॥

भट परो इन नींद को, ए ठौर बुरी विखम[2] ।
यों जगावते न जागियां, तो कौन विध होसी तिन ॥२०॥

तुम देखो भांत धनीय की, कई विध करी चेतन ।
सबों सुनाए कहे इंद्रावती, जागो चलो वतन ॥२१॥

साहेब मांहें बैठ के, बतावत हैं ठौर ।
सो घर तुमको देखाइया, जहां नहीं कोई और ॥२२॥

॥प्रकरण॥२६॥चौपाई॥६३७॥

अब तूं जिन भूल आतम मेरी, पेहेचान के खसम ।
वतन देखाया अपना, जिन छोड़े पिउ कदम ॥१॥

वचन कहे बड़े मुखथें, पर तूं तो समया न भूल ।
तूं कात बारीक धनीय का, ए तातें पावेगी मूल ॥२॥

अजूं तें पाओ न कातिया, इत चाहिएगा सेर भर ।
जब उठेगी आतन से, तब बहुरि[3] चाहेगी अवसर ॥३॥

१. झूम रही । २. जहरीली । ३. फेर फ़र ।

ए जो गमाए दिनड़े, गफलत में जो गल ।
अब तोको उठन के, आए सो दिनड़े चल ।।४।।

जो तूं उठी काते बिना, आए इन अवसर ।
कहा करेगी इन नींद को, जो ले चलसी घर ।।५।।

अजूं न जागे जोर कर, जो ऐसी तुझ पर भई ।
धनी आए बेर दूसरी, तेरी सुध ऐसी क्यों गई ।।६।।

कर सीधा समार तकला, कस कर बांध अदवान ।
दे गांठ माल मरोर के, पूनी लगाए के तान ।।७।।

फेर तूं चरखा उतावला, करके अंग कूवत ।
तूं लेसी सोहाग धनीय को, तेरे बारीक इन सूत ।।८।।

ए रेहेसी अधबीच कातना, दिन आए समें करे भंग ।
तुझ देखत सैयां चलियां, जो हुती तेरे संग ।।९।।

अब हिंमत करके कात तूं, दिल बांध सूत के साथ ।
ए मिहीं सूत सोहाग का, सो होसी तेरे हाथ ॥१०॥

अब नींद करे जिन तूं, ए नींद देवे दुहाग[1] ।
उठ तूं जाग जोर कर, दौड़ ले पिउ सोहाग[2] ॥११॥

ए सूत है अति सोहना, मोल मोहोंगा[3] होसी एह ।
तूं पेहेचान पिउ अपना, वार फेर जीव देह ॥१२॥

अब ले स्याबासी सैयन में, कर तूं ऐसी भांत ।
एह मिहीं सूत सोहाग का, सो रात दिन ले कात ॥१३॥

।।प्रकरण।।२७।।चौपाई।।६५०।।

भोरी तूं न भूल इंद्रावती, ऐसा पिउ का समया पाए ।
तूं ले धनी अपना, औरों जिन देखाए ।।१।।

१. दुख । २. सुख । ३. महेंगा ।

तोहे यों धनी कब मिलसी, पेहेचान के ले सोहाग ।
ऐसी एकांत कब पावेगी, अब है तेरा लाग[1] ।।२।।

बोहोत बखत भला पाइया, धनिऐं दियो तुझे आप ।
मेहेर करी मेहेबूबें, करके संग मिलाप ।।३।।

आंखां खोल के ढांपिए, जिन चूके एती बेर ।
रात दिन तेरे राज का, सूत कात सवा सेर ।।४।।

नेह कर तूं नैनों से, और चसमें[2] से कताए ।
मिहीं सूत ले उजला, आओ आंखें कर पाए ।।५।।

भले कात्या इन सूत को, भला पाया ए बखत ।
भले सो भागी नींदड़ी, भले मिले धनी इत ।।६।।

धनी बिना ए नींदड़ी, टाल ना सके कोई और ।
वार डारों जीव देह सों, मोहे धनी मिले इन ठौर ।।७।।

सई मेरी मुझ कारने, पिउजी दिए इत पाए ।
मैं वारूं तिन पर आतमा, धनी आए जिन राहे ।।८।।

सई तूं मेरा धनी ले बैठी, कोई और न देखनहार ।
देख तूं पिउ लेऊं अपना, तो तूं कहियो सोहागिन नार ।।९।।

इंद्रावती कहे तूं सई[3] मेरी, धनी मिले मुझे इत ।
पिउ ने सब पूरन करी, जो मैं करी उमेदा तित ॥१०॥

सई तूं मेरी बाई रतन, मोहे मिले छबीले लाल ।
करी मुझे सोहागनी, अब मैं भई निहाल ॥११॥

मैं एक विध माँगी पिउ पे, पिउ ने कई विध करी रोसन ।
बातें इन रोसन की, करसी जाए वतन ॥१२॥

।।प्रकरण।।२८।।चौपाई।।६६२।।

१. मौका, अवसर । २. ऐनक । ३. सखी ।

लखमीजी को दृष्टांत

मैं जानूं निध एकली लेऊं, धाम धनी मेरे जीव में ग्रहूं ।
ए सुख और काहूं ना देऊं, फेर फेर तुमको काहे को कहूं ।।१।।

ए वचन यों कहे न जाए, जीव दुख पावे ना कहे जुबांए ।
एह फिकर मैं बोहोतक करूं, पर देह ना पकड़े जो हिरदे धरूं ।।२।।

धनी कहावे तो यों कहूं, ना तो ए सुख औरों क्यों देऊं ।
ए देते मेरा जीव निकसे, ए बानी मेरे जीव में बसे ।।३।।

ए निध लई मैं कसनी कर, श्री धाम धनी चरणों चित धर ।
मैं बोहोतक करूं अंतर, पर सागर पूर प्रगट करे घर ।।४।।

ए बानी धनी अंतरगत कही, केहेने की सोभा कालबुत को भई ।
ना तो एह वचन क्यों कहे जाएं, अंदर कलेजे ज्यों लगे घाए ।।५।।

जिन जानो वचन अचेत में कहे, ए केहेते अनेक दुख भए ।
जब मैं विचारूं चित में आन, ए कैसी मुख निकसी बान ।।६।।

मेरी बुधें लुगा[1] न निकसे मुख, धनी जाहेर करें अखंड घर सुख ।
अब साथ कछुक करो तुम बल, तो पूरन सोभा ल्यो नेहेचल ।।७।।

ए बोहोत भांत है भारी वचन, जो कदी देखो आप होए चेतन ।
इन वचन पर एक कहूं विचार, सुनो साथ मेरे धाम के आधार ।।८।।

धड़थें सिर कोई न्यारा करे, तो आधा वचन ना मुखथें परे ।
जो कोई सारे सकल संधान, तो कह्या न जाए पाओ लुगा निरवान ।।९।।

साथ कारन जीव सगाई जान, सेवियो धाम धनी पेहेचान ।
यों केहेके पकड़ न देवे कोए, यों देते न लेवे सो अभागी होए ॥१०॥

तुम साथ मेरे सिरदार, एह दृष्टांत लीजो विचार ।
रोसन वचन करूं प्रकास, सुकजी की साख लीजो विस्वास ॥११॥

१. हरफ ।

ए देख के नींद टालो भरम, इन वचनों जीव करो नरम ।
वचन जीवसो करो विचार, तब सुख अखंड होए आधार ॥१२॥

पिउ पेहेचान टालो अंतर, परआतम अपनी देखो घर ।
इन घर की कहा[1] कहूं बात, वचन विचार देखो साख्यात ॥१३॥

अब जाहेर लीजो दृष्टांत, जीव जगाए करो एकांत ।
चौद भवन का कहिए धनी, लीला करे बैकुंठ विखे घनी ॥१४॥

लखमीजी सेवे दिन रात, सो ए कहूं तुमको विख्यात ।
जो चाहे आप हेत घर, सो सेवे श्री परमेस्वर ॥१५॥

ब्रह्मदिक नारद कई देव, कई सुर नर करे एह सेव ।
ब्रह्मांड विखे केते लेऊं नाम, सब कोई सेवें श्री भगवान ॥१६॥

ए लीला सेवे कर सार, सेवतां न पावें पार ।
पेहेले सेवा करी है घनें, सो देखियो सुकव्यास वचनें ॥१७॥

ए तो है ऐसा समरथ, सेवक के सब सारे अरथ[2] ।
अब तुम याको देखो ग्यान, बड़ी मत का धनी भगवान ॥१८॥

एक समें बैठे धर ध्यान, बिसरी सुध सरीर की सान[3] ।
ए हमेसा करे चितवन, अंदर काहूं न लखावे किन ॥१९॥

ध्यान जोर एक समें भयो, लाग्यो सनेह ढांप्यो न रह्यो ।
लखमीजी आए तिन समें, मन अचरज भए विस्मे ॥२०॥

आए लखमीजी ठाढ़े रहे, भगवानजी तब जाग्रत भए ।
करी विनती लखमीजी ताहें, तुम बिन हम और कोई सुन्या नाहें ॥२१॥

किनका तुम धरत हो ध्यान, सो मोहे कहो श्री भगवान ।
मेरे मनमें भयो संदेह, कहे समझाओ मोको एह ॥२२॥

कौन सरूप बसे किन ठाम, कैसी सोभा कहो कहा नाम ।
ए लीला सुनो श्रवन, फेर फेर के लागों चरन ॥२३॥

१. क्या । २. कामनायें । ३. होश, सुध ।

सुनो लखमीजी एह वचन, एह बात प्रकासो जिन ।
लखमीजी कहो त्यों करूं, मेरा अंग तुमथें न परूं[1] ॥२४॥

सुनो लखमीजी कहूं तुमको, पेहेले सिवे पूछा हमको ।
इन लीला की खबर मुझे नांहें, सो क्यों कहूं मैं इन जुबांए ॥२५॥

एह वचन जिन करो उचार, न तो दुख होसी अपार ।
और इतका जो करो प्रस्न, सो चौदे लोक की करूं रोसन ॥२६॥

जिन आसंका आनो एह, एह जिन पूछो संदेह ।
लखमीजी तुम करो करार, मुखथें वचन ना आवे बाहार ॥२७॥

तब लखमीजी बड़ो पायो दुख, कह ना सके कलपे अति मुख ।
मोसों तो राख्यो अंतर, अब रहूंगी मैं क्यों कर ॥२८॥

नैंनों आंसू बहुविध झरे, फेर फेर रमा विनती करे ।
धनी एह अंतर सह्यो न जाए, जीव मारो मांहें कलपाए ॥२९॥

अब क्यों कर राखूं जीव हटाए, कलेजा मेरा कटाए ।
कंपमान होए कलकले, उठी आह अंतस्करन जले ॥३०॥

अब जो धनी करो मेरी सार[2], तो ए लीला केहेनी निरधार ।
बोहोत बेर मने किया सही, अनेक विध सिखापन दई ॥३१॥

मेरा जीव क्योंए न रहे, लखमीजी फेर फेर यों कहे ।
तब बोले श्री भगवान, लखमीजी तूं नेहेचे जान ॥३२॥

कोटान कोट करो प्रकार, तो एता तुम जानो निरधार ।
मेरी जुबां न वले एह वचन, एह दृढ़ करो जीवके मन ॥३३॥

लखमीजी कहे सुनो अब राज, मेरे आतम अंग उपजत दाझ ।
नहीं दोष तुमारा धनी, अप्राप्त[3] मेरी है घनी ॥३४॥

अब सरीर मेरा क्यों रहे, ए अगनी जीव न सहे ।
अब अग्या मांगूं मेरे धनी, करूं तपस्या देह कसनी ॥३५॥

१. अलग - जुदा । २. सुध । ३. अयोग्यता (अभागी) ।

भगवान जी बोले तिन ताओ, लखमीजी बेर जिन ल्याओ ।
तब कलप्या जीव दुख अनंत कर, उपज्यो वैराग लियो हिरदे धर ॥३६॥

लखमीजी को आसा थी घनी, जानों विछोहा ना देसी धनी ।
अब चरनों लाग लखमीजी चले, प्यादे पांउ रोवे कलकले ॥३७॥

इन समें विरह कियो अति जोर, बड़ो दुख पाए कियो अति सोर ।
एक ठौर बैठे जाए दमे देह, भगवानजी सों पूरन सनेह ॥३८॥

सीत धूप बरखा ना गिने, करे तपस्या जोर अति घने ।
सनेह धर बैठे एकांत, एते सात भए कल्पांत ॥३९॥

तब ब्रह्माजी खीरसागर, आए विष्णु पे बैकुंठ घर ।
ए प्रभुजी ए क्या उतपात, लखमीजी तप करे कल्पांत सात ॥४०॥

भगवानजी बोले तब तांहें, दोष हमारा कछुए नांहें ।
तो भी वचन तुमको कहे जाए, लखमीजी बोहोत दुख पाए ॥४१॥

एता रोष तुम ना धरो, लखमीजी पर दया करो ।
तुम स्वामी बड़े दयाल, लखमीजी दुख पावे बाल ॥४२॥

स्वामीजी ए ढील करो जिन, लखमीजी बुलाओ ततखिन ।
चरन ग्रहे तब खीरसागरें, और फेर फेर ब्रह्मा विनती करे ॥४३॥

चलो प्रभुजी जाइए तित, बुलाए लखमीजी आइए इत ।
तब दया कर आए भगवान, लखमीजी बैठे जिन ठाम ॥४४॥

लखमीजी परनाम कर आए, भगवानजी तब सनमुख बुलाय ।
लखमीजी चलो जाइए घरे, तब फेर रमा बानी उचरे ॥४५॥

धनी मेरे कहो वाही वचन, जीव बोहोत दुख पावे मन ।
जो तप करो कल्पांत एकईस, तो भी जुबां ना वले कहे जगदीस ॥४६॥

देखलाऊं मैं चेहेन[१] कर, तब लीजो तुम हिरदे धर ।
तब ब्रह्मा और खीरसागर दोए, लखमीजी की विनती होए ॥४७॥

१. चरित्र ।

लखमीजी उठो तत्काल, दया करी स्वामी दयाल ।
अब जिन तुम हठ करो, आनंद अंतस्करन में धरो ॥४८॥

तब लखमीजी लागे चरनें, यों बुलाए ल्याए आनंद अति घनें ।
तब ब्रह्मा खीरसागर सुख पाए फिरे, दोऊ आए आप अपने घरे ॥४९॥

अब ए विचार तुम देखो साथ, ना वली जुबां[1] बैकुंठनाथ ।
ग्रही वस्त भारी कर जान, तो भी वचन ना कहे निरवान ॥५०॥

ना तो बैकुंठनाथ को कैसी खबर, बिना तारतम क्या जाने मूल घर[2] ।
और भी खबर कछुए ना कही, तो भी निध भारी कर ग्रही ॥५१॥

बिना भारी कौन भार उठावे, मुखथें वचन कह्यो न जावे ।
जब भया कृष्ण अवतार, रूकमनी हरन कियो मुरार ॥५२॥

माधवपुर व्याही रूकमनी, धवल मंगल गावे सोहागनी ।
गाते गाते लिया बृज नाम, तब पीछे भोम पड़े भगवान ॥५३॥

तब नैनों आंसू बोहोत जल आए, काहूपे ना रहे पकराए ।
सुख आनंद गयो कहूं चल, अंग अंतस्करन गए सब गल ॥५४॥

तब सब किने पायो अचरज[3], यों लखमीजी को देखाया बृज ।
सोले कला दोऊ सरूप पूरन, ए आए हैं इन कारण ॥५५॥

लोक जाने आए असुरों कारन, विष्णु कृष्ण देह धर पूरन ।
ए हुकमें असुर कई देवे उड़ाए, ऐसा बल हैं बैकुंठराए ॥५६॥

क्या समझें लोक अंदर की बात, देखलावने लखमीजी को आए साख्यात ।
उठ बैठे श्री कृष्णजी पूरन किया काम, यों लखमीजी की भानी हाम ॥५७॥

ए चित में विचारो रही, ए इसारत सुकें कही ।
ए लीला सुकें नीके कर गाई, जो लखमीजी को भगवानें देखाई ॥५८॥

ए बृज लीला जो अपनी, जाकी अस्तुति करत हैं धनी ।
पेहेले जो लीला तुम बृज में करी, अछर[4] सदासिव चित में धरी ॥५९॥

१. जबान । २. परम धाम । ३. आश्चर्य । ४. अक्षर, अविनाशी ।

रास लीला जो तुम बनमें किध, सो अछर सरूपें ग्रही जाग्रत बुध ।
ता लीला को ए प्रतिबिंब, जो विष्णुए देखाई रमा को सनंध ॥६०॥

तो वचन तुमको कहे जांए, जो तुम धाम की लीला मांहें ।
बृजवालो पिउ सो एह, वचन अपन को केहेत हैं जेह ॥६१॥

रास मिने खेलाए जिने, प्रगट लीला करी हैं तिने ।
धनी धाम के केहेलाए, ए जो साथको बुलावन आए ॥६२॥

तुम कारन मैं कह्या दृष्टांत, जीव सो वचन विचारो एकांत ।
बैकुंठ ठौर तित का ग्यान, केहेने वाला श्री भगवान ॥६३॥

लखमीजी तहां श्रोता[1] भई, कई विध कसनी कर कर रही ।
तो भी न पाया एक वचन, तुम धाम धनी ले बैठे धन[2] ॥६४॥

अजहूं ना तुम टालो भरम[3], क्यों ना करत हो जीव नरम ।
ए नौतनपुरी जो कही नगरी, श्री देवचंदजीऐं लीला करी ॥६५॥

ए प्रगट वचन किए अपार, तो भी ना हुई तुमें सुध सार ।
छोड़ो अमल माया जोर कर, जीव जगाओ वचन चित धर ॥६६॥

ए माया देखो न्यारे होए, भई तारतम की रोसनाई दोए ।
जो बानी श्री धनिएँ दई, सो आतम के अंदर तुम क्यों ना लई ॥६७॥

माया गुन सब करो हाथ, पेहेचानो प्राण को नाथ ।
अब एता आतमसों करो विचार, कौन वचन कहे आधार ॥६८॥

जोलों जीव विचार विकार न काटे, ज्यों छींट ना लगे घड़े चिकटे[4] ।
इंद्रावती कहे सुनो साथ, जिन छोड़ो अपनो प्राणनाथ ॥६९॥

फेर फेर ना आवे ए अवसर, जिन हाम ले जागो घर ।
थोड़े में कह्या अति घना, जान्या धन क्यों खोइए अपना ॥७०॥

हम आगे ना समझे भए ढीठ[5], तो दई श्री देवचंदजीऐं पीठ ।
ना तो क्यों छोड़े साथ को एह, जो कछू किया होए सनेह ॥७१॥

१. सुनने वाली । २. अखंड का खजाना । ३. भ्रम । ४. चीकना । ५. जिद्दी ।

अब फेर आए दूजा देह धर, दया आपन ऊपर अति कर ।
अब ए चेतन कर दिया अवसर, ज्यों हंसते बैठ जागिए घर ॥७२॥

सब मनोरथ हुए पूरन, जो ए बानी विचारो अंतस्करन ।
ए तो इंद्रावती कहे फेर फेर, जो धाम धनी कृपा करी तुम पर ॥७३॥

॥प्रकरण॥२९॥चौपाई॥७३५॥

प्रगटबानी प्रकास की - राग सामेरी

सोई ने सोई सूते क्या करो जी, या अगिन जेहेर जिमी मांहीं जी ।
जाग देखो आप याद करो, ए नींद निगल गई जीव के तांई जी ॥१॥

ए नींद तिनको ले गई रे, जो नाहीं साथी आपन जी ।
इन ठगनी जिमिऐं बोहोतक ठगे रे, तुम जिन सोओ इत खिन जी ॥२॥

नाहीं रे नींद कोई घेन घारन[1], नींद होए तो लीजे उठाए जी ।
उठाए जीव को खड़ा कीजे, फेर पड़े सोई उलटाए जी ॥३॥

सोई घेनने सोई घारन रे, सोई घूटन[2] अधकी[3] आवे जी ।
याही जिमी और याही नींद से, धनी बिना कौन जगावे जी ॥४॥

इन जेहेर जिमी से कोई न उबरया, तुम सूते तिन ठाम जी ।
इन जेहेर जिमी अगिन उजाड़ रे, नहीं वसती इन गाम जी ॥५॥

ए विख की जिमी और विख के बिछौने, विखै की आकार जी ।
अष्ट धात मिने सब विख के, विखै का विस्तार जी ॥६॥

गुन पख इंद्री सब विख के, विखै को सब आहार जी ।
आतम निरमल एक वतन की, सो तो कही निराकार जी ॥७॥

विख की तलाई ने विख के ओढ़ना, विख पलंग दिया बिछाए जी ।
विख का सिराने विख का ओछाड़, विख पंखा विख वाए जी ॥८॥

जागते विख और सुपने विख रे, नींद में विख निदान जी ।
बाहेर का विख क्यों कर कहूं रे, वहे आंधी वाए अग्यान जी ॥९॥

१. गहरी नशीली नींद । २. घूंट घूंट कर पीना । ३. बार बार (अत्यधिक) ।

वस्तर विख के भूखन विख के, सकल अंग विख साज जी ।
ए विख नख सिख जीव को भेदयो, सो क्यों छूटे बिना श्री राज जी ॥१०॥

जोर कर तुम जागो जीव जी, नहीं सूते की एह जिमी जी ।
ज्यों ज्यों सोइए त्यों त्यों बाढ़े विख विस्तार, पीछे दुख पावे जीव आदमी जी ॥११॥

ए जिमी तुम क्यों न छोड़ो, अजूं नाहीं नींद बाढ़ी जी ।
इन जिमी नींद दुखड़े घनें रे, पीछे क्योंए न जाए काढ़ी जी ॥१२॥

बोहोत देखे दुख अनेक होएसी, ताथें उठो तत्काल जी ।
जल के जीव को घर जल में, ज्यों रहे मकड़ी मांहें जाल जी ॥१३॥

सब कोई जाली गूंथे अपनी, फेर अपनी गूंथी में उरझाए जी ।
उरझे पीछे कई दुख देखे, दुखै में जीव जाए जी ॥१४॥

बोहोत दुख देखे जीव जाते, तो भी गूंथे जाली फेर फेर जी ।
दोष नहीं इन मकड़ी का रे, इनका घर हुआ जाली अंधेर जी ॥१५॥

अपने घर इत नाहीं साथजी, चौदे भवन में कित जी ।
ता कारन पिउजी करें रे पुकार, तुम क्यों सूते इत जी ॥१६॥

ओ दुख के घर सो भी ना छोड़े, तुम याद ना करो सुख के घर जी ।
सास्त्र सबों पे साख देवाई, तुम अजहूं ना देखो चित धर जी ॥१७॥

बेहद सुख पार बेहद घर, बेहद पार श्री राज जी ।
अछरातीत सुख अखंड देवे को, मैं जगाऊं तुमारे काज जी ॥१८॥

पिउ पुकार पुकार थके, तुम अजहुं जल बिन गोते खात जी ।
दिन उगते संझा होत है, पीछे आड़ी पड़ेगी रात जी ॥१९॥

रात पड़ी तब कोई न जागे, पीछे कोई ना करे पुकार जी ।
निसाएँ नींद जोर बाढ़ेगी, पीछे बढ़ेगा विख विस्तार जी ॥२०॥

संझा लगे धनी रेहेसी साथ कारन, तुम अजहूं ना नींद निवारो जी ।
पेहेचान पिउ सुख लीजिए, तुम अपना आप वार डारो जी ॥२१॥

पुकार करते रात पड़ी, पिउ रात ना रेहेसी निरधार जी ।
जो दुस्मन तुमको भुलावत हैं, सो तुम क्यों न करत विचार जी ॥२२॥

ए विखम भोम छोड़ते जो आड़ी करे, सो जानियों तेहेकीक दुस्मन जी ।
जो लेने न देवे सुख अखंड, सो क्यों न देखो सुन वचन जी ॥२३॥

ए दुस्मन तेरे विख भरे, जिन लियो संसार घेर जी ।
ओ भुलावत तुमको जुदी भांतें, तुम जिन भूलो इन बेर जी ॥२४॥

भी तुमको दिखाऊं दुस्मन, जिनहूं न छोड़्या कोए जी ।
सो तुमको दिखाऊं जाहेर, तुमको अंदर झूठ लगावे सोए जी ॥२५॥

गुन अंग इंद्री देखो रे चलते, जो उलटे लगे संसार जी ।
एही दुस्मन विसेखे अपने, सो करत हैं सिर पर मार जी ॥२६॥

तुम करो लड़ाई इनसों, मार टूक करो दुस्मन जी ।
फेर वाको उलटाए चेतन करो, ज्यों होवें तुमारे सजन जी ॥२७॥

सनमंधी साथ को कहे वचन, जीव को एता कौन कहे जी ।
ए वानी सुन ढील करे क्यों वासना, सो ए विखम भोम क्यों रहे जी ॥२८॥

छल की भोम को तुम समझत नाहीं, ना सुनत मेरी बात जी ।
जानत हो दिन दो पोहोर रेहेसी, पाओ पल में हो जासी रात जी ॥२९॥

अबही रात आई देखोगे, उठसी अनेक अंधेर जी ।
जीव अंधेर जब देख उरझसी, तब आवसी विख के फेर जी ॥३०॥

विख के फेर अनेक उपजसी, करम केरा जे दुख जी ।
भी फिरसी फेर अनेक विधके, काहूं जीव को न होवे सुख जी ॥३१॥

सुनियो जो तुम हो ब्रह्मसृष्ट के, जिन आओ मांहें रात जी ।
इन रात के दुख घने दोहेले, पीछे उड़सी अंधेर प्रभात जी ॥३२॥

दूर होसी इन रात के प्रभात, रात छेह क्योंए न आवे जी ।
दुख की रात घनूं लागसी दोहेली, पीछे फजर मुख न देखावे जी ॥३३॥

महाप्रले होसी जब लग, तबलों रेहेसी अंधेर जी ।
ता कारन पिउजी करे रे पुकार, जिन भूलो इन बेर जी ॥३४॥

तारतम के उजाले कर, रोसन कियो इन सूल जी ।
कई कोट ब्रह्मांड देखाई माया, पाया अंकूर पेड़ मूल जी ॥३५॥

पिउ पधारे बुलावन तुमको, तो होत है एती पुकार जी ।
यों करते जो नहीं मानो, तो दुख पाए चलसी निरधार जी ॥३६॥

विखम बड़ा जल मांहें अंधेर, कई लगसी लेहेरें निघात जी ।
विसेखें जीव बेसुध होसी, नहीं सुनोगे निध साख्यात जी ॥३७॥

मांहें मछ गलागल, लेहेरें आड़े टेढ़े बेहेवट जी ।
दसो दिसा कोई ना सूझे, फिरवलसी अंधकार पट जी ॥३८॥

तुम हो अंग मेरे के, जिन देखो माया को मरम जी ।
धाम धनी आए तुम कारन, तुमें अजहूं न आवे सरम जी ॥३९॥

ए नींद तुम को क्यों कर उड़सी, जोलों न उठो बल कर जी ।
सेवा करो समें पिउ पेहेचान, याद करो आप घर जी ॥४०॥

ए अमल तुमको क्यों रे उतरसी, जो जेहेर चढ़्या अति भारी जी ।
पिउजी के बान तो तोड़े संधान[1], पर तुमको केहे केहे हारी जी ॥४१॥

जो जानो घर पाइए अपना, तो एक राखियो रस वैराग जी ।
सकल अंगे सुध सेवा कीजो, इन विध बैठो घर जाग जी ॥४२॥

जो जानो इत जाग चलें, तो लीजो अर्थ प्रकास जी ।
जीव को कहियो ए कह्या सब तोको, सिर लिए होसी उजास जी ॥४३॥

इन उजाले जेहेर उतरसी, तब बढ़ते बल नहीं बेर जी ।
परआतम को आतम देखसी, तब उतर जासी सब फेर जी ॥४४॥

एह विध कर कर आतम जगाई, तब होसी सब सुध जी ।
सुध हुए पूर चलसी प्रेम के, होसी जाग्रत हिरदे बुध जी ॥४५॥

१. जोड़, संघ, कड़ी ।

निरमल हिरदे में लीजो वचन, ज्यों निकसे फूट बान जी ।
ए कह्या ब्रह्मसृष्ट ईश्वरी को, ए क्यों लेवे जीव अग्यान जी ॥४६॥

माया जीव हममें रहे ना सके, सो ले न सके एह वचन जी ।
ना तो सब्द घने लागसी मीठे, पर रेहेने ना देवे झूठा मन जी ॥४७॥

जो कोई जीव होए माया को, सो चलियो राह लोक सत जी ।
जो कोई होवे निराकार पार को, सो राह हमारी चलत जी ॥४८॥

वासना को तो जीव न कहिए, जीव कहिए तो दुख लागे जी ।
झूठकी संगते झूठा केहेत हों, पर क्या करों जानों क्योंए जागे जी ॥४९॥

ए कठन वचन मैं तो केहेती हों, ना तो क्यों कहूं वासना को जीव जी ।
जिन दुख देखे गुन्हेंगार होत हो, आग्या ना मानो पिउ जी ॥५०॥

प्रकास बानी तुम नीके कर लीजो, जिन छोडो एक खिन जी ।
अंदर अर्थ लीजो आतम के, विचारियो अंतस्करन जी ॥५१॥

अंदर का जब लिया अर्थ, तब नेहेचे होसी प्रकास जी ।
जब इन अर्थें जागी वासना, तब वृथा ना जाए एक स्वांस जी ॥५२॥

ए प्रगट बानी कही प्रकास की, इंद्रावती चरने लागे जी ।
सो लाभ लेवे दोनों ठौर को, जाकी वासना इत जागे जी ॥५३॥

॥प्रकरण॥३०॥चौपाई॥७८८॥

बेहद वानी

बेहद के साथी सुनो, बोली बेहद वानी ।
बड़े बड़े रे हो गए, पर काहूं न जानी ॥१॥

उपाय किए अनेको, पर काहूं ना लखानी ।
ए वानी निज बुध बिना, न जाए पेहेचानी ॥२॥

ना तो आए बुध के सागर, गुन खट ग्यानी ।
भगवानजी को महादेवजी, पूछे बेहद वानी ॥३॥

विष्णु कहे सिवजी सुनो, तुम पूछत हो जेह ।
आद करके अबलों, अगम कहियत हैं एह ।।४।।

कोट ब्रह्मांड जो हो गए, तित काहूं ना सुनी ।
खोज खोज खोजी थके, चौदे लोक के धनी ।।५।।

फेर पूछे सिव विष्णु को, कहे ब्रह्मांड और ।
और ब्रह्मांड की वारता, क्यों पाइए इन ठौर ।।६।।

ए बात तो सिवजी जाहेर, इत है कई भांत ।
ठौर ठौर कहे वचन, ए जो भेद कल्पांत ।।७।।

सुकजी और सनकादिक, कई और भी साध ।
तिन खोज खोज के यों कह्या, ए तो अगम अगाध ।।८।।

एक सब्द के कारने, लखमी जी आप ।
नेक भी जाहेर ना हुई, अंग दिए कई ताप ।।९।।

याही रस के कारने, कैयों किए बल ।
कैयों कलप्या अपना, पर काहूं ना प्रेमल ॥१०॥

सो रस बृज की सुंदरी, पायो सुगम ।
सो सेहेजे घर आइया, जो कहे वेद अगम ॥११॥

ए निध अपने घर की, इन यों तो बिलसी ।
अनूं[1] चोंच पात्र या बिना, नाहीं काहूं कैसी ॥१२॥

अबलों काहूं ना जाहेर, श्री धाम के धनी ।
खेले आप इच्छा कर, अर्धांग जो अपनी ॥१३॥

साथ इच्छाएं सुपन में, खेल मांहें आया ।
बेहद थे पिउ आएके, बेहद साथ खेलाया ॥१४॥

ए वानी इत हम बिना, और काहूं न होवे ।
आधा लुगा ना पाइए, जो जीव अपना खोवे ॥१५॥

१. कीडी ।

साथ देखने आइया, पिउ इछा कर ।
बेहद धनी साथ को, खेलावें चित धर ॥१६॥

ले चलसी सब साथ को, पार बेहद घर ।
पीछे अवतार बुध को, सब करसी जाहेर ॥१७॥

बैकुंठ जाए विष्णु को, सब देसी खबर ।
विष्णु को पार पोहोंचावसी, सब जन सचराचर ॥१८॥

खोज पाई जिन ए निध, धंन धंन सो बुध ।
दृढ़ करी सनेहसों, साथ को कही सुध ॥१९॥

नौतन पुरी भली पेरे, चितसों चरचानी ।
साथी जो बेहद के, तिनहूं पेहेचानी ॥२०॥

बेहद वाट देखावहीं, पिउ आए के पास ।
तारतम ले आए धनी, ए जोत उजास ॥२१॥

जाहेर हुई जो साथ में, देखो रास प्रकास ।
तारतम वानी वतन की, जिन कियो तिमर सब नास ॥२२॥

हिरदे आद नारायन के, वेद जिनको स्वांस ।
ग्रन्थ सबों की उतपन, वानी वेद व्यास ॥२३॥

तामे फल श्री भागवत, सुकजी मुख भाख ।
पाती ल्याया बेहद की, साथ की पूरी साख ॥२४॥

और भी नाम केते कहूं, इंड वानी अलेखे ।
सब साख देवे बेहद की, जो कोई दिल दे देखे ॥२५॥

ए बानी ए वाटड़ी, कबूं ना जाहेर ।
धनी ब्रह्मांड के खोजिया, सब मांहें बाहेर ॥२६॥

एक जरा किनहूं न पाइया, इत अनेक जो धाए ।
नाम ब्रह्मांड के धनी कहे, दूजे कहा[१] करूं सुनाए ॥२७॥

१. क्या ।

सो निध जाहेर इत हुई, धंन धंन संसार ।
धंन धंन खंड भरथ का, धंन धंन नर नार ॥२८॥

धंन धंन पांचों तत्व, धंन धंन त्रैगुन ।
धंन धंन जुग सो कलजुग, धंन धंन पुरी नौतन ॥२९॥

अब कहूं लीला प्रथम की, सुनियो तुम साथ ।
जो कबूं कानों ना सुनी, सो पकड़ देऊं हाथ ॥३०॥

धोखा कोई न राखहूं, करूं निरसंदेह ।
मुक्त होत सचराचर, आयो वतनी मेह ॥३१॥

धंन गोकुल जमुना त्रट, धंन धंन बृजवासी ।
अग्यारे बरस लीला करी, करी अविनासी ॥३२॥

चौदे लोक सुपन के, साथ आया देखन ।
मुक्त दे पीछे फिरे, सदासिव चेतन ॥३३॥

और ब्रह्मांड जोगमाया को, कियो खेलने रास ।
खेल करे श्री राजसों, साथ सकल उलास ॥३४॥

नौतन खेल या रास को, कबहूं ना होवे भंग ।
खेल साथ सुपन में, जोगमाया के रंग ॥३५॥

तुम देखो साथ सुपन में, खेल खेले ज्यों ।
एक विधें साथ जागिया, खेल त्यों का त्यों ॥३६॥

एह ब्रह्मांड तीसरा, हुआ उतपन ।
धाख रही कछू अपनी, तो फेर आए देखन ॥३७॥

ब्रह्मांड तीनों देखे हम, खेल बिना हिसाब ।
जाग वतन बातां करसी, जो देखी मिने ख्वाब ॥३८॥

ए जो ब्रह्मांड उपज्या, जिनमें राख्या सेर[1] ।
साथ घरों सब पोहोंचिया, और इत आए फेर ॥३९॥

१. द्वार, रास्ता ।

ज्यों हरे ब्रह्मांए बाछरू, गोवाला संघातें ।
ततखिन सो नए किए, आप अपनी भांतें ॥४०॥

गोकुल मिने आप अपने, घर सब कोई आया ।
खबर ना पड़ी काहूं को, ऐसी रची माया ॥४१॥

एह दृष्टांते समझियो, राह राख्या इन विध ।
ए बल माया देखियो, और ऐसी किध ॥४२॥

साथ चल्या सब वतन, अपने पिउ साथ ।
और खेले रासमें अखंड, इत उठे प्रभात ॥४३॥

सोई गोकुल जमुना त्रट, जानों सोई बृजवासी ।
रास लीला जाने खेल के, इत आए उलासी ॥४४॥

जाने सोई ब्रह्मांड, जो खेलत सदाए ।
ए ब्रह्मांड जो उपज्या, ऐसी रे अदाए ॥४५॥

दोऊ ब्रह्मांडों बीच में, सेर राख्या सार ।
खबर ना पड़ी काहू को, बेहद का बार[१] ॥४६॥

इत फेर उठे जो प्रतिबिंब, यामें साथ पिउ ।
खेल आए जाने हम नहीं, धोखा रह्या जिउ ॥४७॥

धोखा इनों का भी ना मिट्या, तो कहा[२] करे और ।
बेहद वानी के माएने, क्यों होवे दूजे ठौर ॥४८॥

यों साथ पिछला आइया, इत इन दरवाजे ।
मूल साथ फेर आवसी, ए किया जिन काजे ॥४९॥

क्या जाने हद के जीवड़े, बेहद की बातें ।
रास में खेले अखंड, इत उठे प्रभातें ॥५०॥

खेले पिछले साथ में, सात दिन तांई ।
अक्रूर चल्या बुलाए के, पोहोंचे मथुरा मांहीं ॥५१॥

१. द्वार । २. क्या ।

तोलों भेख जो पिउ का, कुबलापील मारया ।
चांडूल मुष्टक संघार के, जाए कंस पछाड़या ॥५२॥

टीका दिया उग्रसेन को, भए दिन चार ।
छोड़ वसुदेव भेख उतारिया, या दिन थें अवतार ॥५३॥

अब इहां से लीला हद की, सोतो सारे केहेसी ।
पर बेहद वानी हम बिना, दूजा कौन देसी ॥५४॥

नरसैयां इन पेंडे खड़ा, लीला बेहद गाए ।
बल करे अति निसंक, मिने पैठ्यो न जाए ॥५५॥

जो बल किया नरसैऐं, कोई करे ना और ।
हद के जीव बेहद की, लीला देखी या ठौर ॥५६॥

नरसैयां दौड़्या रस को, वानी करे रे पुकार ।
रस जाए हुआ अंदर, आड़े दरवाजे चार ॥५७॥

द्वारने इन बेहद के, लेहेरें आवें सीतल ।
सो इत खड़ा लेवहीं, रस की प्रेमल ॥५८॥

इन दरवाजे नरसैयां, प्रेमें लपटाना ।
लीला पीछले साथ में, सुख ले समाना ॥५९॥

लीला सुकें बरनन करी, बृज रास बखाना ।
बेहद की बानी बिना, ठौर ठौर बंधाना ॥६०॥

ना तो ए क्यों ऐसे वरनवे, क्यों कहे पंच अध्याई ।
ए रस छोड़ और वचन, मुख काढ्यो न जाई ॥६१॥

होवे अस्कंध द्वादस थें, इत कोट गुने ।
पर क्या करे आग्या इतनी, बस नांहीं अपने ॥६२॥

ना हुई जाहेर या मुख, बेहद की बान ।
धाख रही बोहोत हिरदे, कलप्या दुख आन ॥६३॥

कंपमान होए कलप्या, रस गया याथें ।
सोए दुख क्यों सेहें सके, रस जाए जाथें ॥६४॥

बेहद के सब्द कहे का, था हरख अपार ।
दरवाजा ना खोलिया, रह्या रस सार ॥६५॥

रास रात बरनन करी, देखो मन विचार ।
नारायनजी की रात को, कोईक पावे पार ॥६६॥

पार नहीं रास रात को, ए तो बेहद कही ।
तामें अखंड लीला रास की, पंच अध्याई भई ॥६७॥

देखो जाहेर याके माएने, चित ल्याए वचन ।
रात ऐसी बड़ी तो कही, लीला बड़ी वृंदावन ॥६८॥

ए पंच अध्याई होवे क्यों कर, मेरे मुनीजी की बान ।
पर सार समें बीच अटक्या, रस आए सुजान ॥६९॥

दुख हुआ बोहोत कलप्या, पर कहा[1] करे जान ।
पात्र बिना पावे नहीं, रस बेहद वान ॥७०॥

पात्र बिना तुम पाइया, मुनीजी क्यों करो दुख ।
आज लगे बेहद का, किन लिया है सुख ॥७१॥

एतो हमारा कागद, तुम साथे आया ।
खबर हद बेहद की, देकर पठाया ॥७२॥

विध सारी कागद में, हम लिए विचार ।
तुम साथे मुनीजी संदेसड़ा, आए समाचार ॥७३॥

या सुध कागद हम लई, समझे सब सार ।
औरन को ए कोहेड़ा, ना खुले द्वार ॥७४॥

और विचारे क्या जानहीं, जाने जाको होए ।
हम बिना द्वार बेहद के, खोल ना सके कोए ॥७५॥

१. क्या ।

लाख बेर देखो फेर, न पावे कड़ी कल[1] ।
पाई नहीं त्रिगुन ने, कर कर गए बल ॥७६॥

ए तो कोहेड़ा हद का, बेहदी समाचार ।
ए देखावें हम जाहेर, साथ को खोल द्वार ॥७७॥

सुकजी इत ले आइया, बेहद के बोल ।
फेर टालो अंदर का, देखो आंखां खोल ॥७८॥

अस्कंध दूजा मुनिऐं कह्या, चत्रश्लोकी जित ।
ब्रह्मांड की जहां उतपन, अर्थ देखो तित ॥७९॥

ए द्वार देखोगे जाहेर, होसी माया पेहेचान ।
ए माएना नीके लीजियो, हिरदे में आन ॥८०॥

मोह तत्व कह्या नींद को, सुरत अहंकार ।
सुपन को कह्या ब्रह्मांड, नाम धरे बेसुमार ॥८१॥

पैंड़ा बेहद वतन का, ए वतनी जाने ।
हद का जीव बेहद का, द्वार क्यों पेहेचाने ॥८२॥

देख्यो द्वार बेहद के, सुकजी बलवंत ।
पर कल किल्ली क्यों पावहीं, जोर किया अनंत ॥८३॥

द्वार खोलने दौड़िया, सुकजी सपराना ।
ले चल्या संग परीछित, सो तो बोझे दबाना ॥८४॥

बल किया बलिऐं घना, द्वार द्वार पछटाना ।
पर साथे संघाती हद का, इत सो उरझाना ॥८५॥

रास लीला सुख अखंड, इत तो ना केहेलाना ।
पाछल तान हुई घनी, अध बीच लेवाना ॥८६॥

पात्र बिना रस क्यों रहे, आवत ढलकाना ।
पात्र हुते तिन पाइया, भली भांत पेहेचाना ॥८७॥

१. कला - कौशल (अपनी कला से कोयडे को बूझना) ।

बरस असी लगे ए रस, सारी पेरे सचवाना ।
लिया पिया साथ में, जिन जैसा जाना ॥८८॥

एक बूंद बाहेर न निकस्या, साथ मिने समाना ।
जिन का था तिन बिलसिया, मिनो मिने बटाना ॥८९॥

अब हम मिने थें ए रस, इत आए छलकाना ।
छोल आई ज्यों सागर, अंग थें उभराना ॥९०॥

जोर किया हम बोहोतेरा, रस रह्या न ढ़पाना ।
ए अब जाहेर होएसी, बाहेर प्रगटाना ॥९१॥

ए रस आज के दिन लों, कित काहू न लखाना ।
आवसी साथ इन विध, ए रस लपटाना ॥९२॥

जान होए सो जानियो, ए क्योंकर रहे छाना ।
क्यों कर ए छिपा रहे, सब सुनसी जहाना ॥९३॥

ए बानी बेहद प्रगटी, इंद्रावती मुख ।
बोहोत विधें हम रस पिए, बेहद के सुख ॥९४॥

या बानी के कारने, कई करें तपसन ।
या बानी के कारने, कई पीवें अगिन ॥९५॥

या बानी के कारने, कई दमे देह ।
या बानी के कारने, कई करें कष्ट सनेह ॥९६॥

या बानी के कारने, कई गले हेम ।
या बानी के कारने, कई लेवे अंनसन नेम ॥९७॥

या बानी के कारने, कई भैरव झंपावे ।
या बानी के कारने, तिल तिल देह कटावे ॥९८॥

या बानी के कारने, कई संधान सारे ।
या बानी के कारने, कई देह जारे ॥९९॥

या बानी के कारने, करें कई बिध ताब ।
सो मुख थें केते कहूं, हुए जो बिना हिसाब ॥१००॥

किन एक बूंद न पाइया, रसना भी वचन ।
ब्रह्मांड धनियों देखिया, जो कहावें त्रैगुन ॥१०१॥

और भी नाम अनेक हैं, पर लेऊं कहा[1] के ।
ब्रह्मांड के धनियों ऊपर, लिए जाए न ताके ॥१०२॥

सो रस सागर इत हुआ, लेहेरें उछले ।
साथ सबे हम बिलसहीं, बाहेर पूर भी चले ॥१०३॥

पेहेले बीज उदे हुआ, पुरी जहां नौतन ।
सब पुरियों में उत्तम, हुई धंन धंन ॥१०४॥

फेर कहूं विध सकल, जासों सब समझाए ।
संसा कोई साथ को, मैं राख्यो न जाए ॥१०५॥

जो रस गोकुल प्रगट्या, सो तो सुख अलेखे ।
बिन जाने सुख बिलसिया, घर कोई न देखे ॥१०६॥

ए सुख सुपने बिलसिया, साथ पिउ संघाते ।
घर देखे भागे सुपना, ना देखाय ताथे ॥१०७॥

सुपन भागे सुख क्यों होए, खेल क्यों देखाए ।
जब सुख वतन लीजिए, नींद उड़के जाए ॥१०८॥

नींद उड़े भागे सुपना, तब फेर फेरा होए ।
सुख सुपन और वतन, लिए जांए ना दोए ॥१०९॥

या विध साथ समझियो, सुख साथ को दियो ।
यों बिन जाने बृजमें, सुख सुपने लियो ॥११०॥

अब सुख रास कहा कहूं, जाने निज सुख होए ।
ए सुख साथ पिउ बिना, न जाने कोए ॥१११॥

१. किन के ।

ए पिउ सरूप नौतन, नौतन सिनगार ।
नेह हमारा नौतन, नौतन आकार ॥११२॥

ए बन सुंदर नौतन, नौतन वाओ वाए ।
जल जमुना नौतन, लेहेरां लेवें बनराए ॥११३॥

सुगंध बेलियां नौतन, जिमी रेत सेत प्रकास ।
नेहेकलंक चंद्रमा नौतन, सकल कला उजास ॥११४॥

नौतन रंग पसु पंखी, बानी नई रसाल ।
नौतन वेन बजावहीं, नए सुख देवें लाल ॥११५॥

या रस सुख केते कहूं, कई रेहेस[१] प्रकार ।
साथ पिउ संग विलास, हम किए अपार ॥११६॥

कई बातें या सुख की, जीव हिरदे जाने ।
ए सुख पेहेले थें अलेखे, अति अधिकाने ॥११७॥

तेज सबों में मूल का, सबहीं चेतन ।
थिर चर चेतन ए लीला, ऐसी उतपन ॥११८॥

पर ए सुख सबे सुपन में, नेठ नींद जो मांहें ।
ए सुख जोग माया मिने, दृष्ट ना घर तांहें ॥११९॥

एक सुख कहे गोकुल के, और सुख रास सुपन ।
सुख दोऊ क्यों होवहीं, विचारियो मन ॥१२०॥

जब लीजे सुख सुपन, नहीं वतन दृष्ट ।
जब सुख वतन देखिए, नहीं सुपन की सृष्ट ॥१२१॥

यों सुख सुपने लिए, कछुए नहीं खबर ।
इन दोऊ लीला मिने, सुध नाहीं घर ॥१२२॥

या विध लीला दोऊ करी, सिधारे वतन ।
ए ब्रह्मांड जो तीसरा, ले आए आपन ॥१२३॥

१. रहस्यमयी ।

जो मनोरथ मूल का, हुआ नहीं पूरन ।
बिन सुध विरह विलास किए, यों रही धाख मन ॥१२४॥

धाख क्यों रहे अपनी, ए किया इंड फेर ।
साथें आए पिउजी, इत दूजी बेर ॥१२५॥

लीला दोऊ पेहेले करी, दूजे फेरे भी दोए ।
बिना तारतम ए माएने, न जाने कोए ॥१२६॥

एक में उपज्या तारतम, दूजे मिने उजास ।
सब विध जाहेर होएसी, जागनी प्रकास ॥१२७॥

तारतम जोत उद्दोत है, तिनथे कहा होए ।
एक सुपन दूजा वतन, जीव देखे दोए ॥१२८॥

वतन देखते जाहेर, दूजी दोए लीला जो करी ।
ए सब याद आवहीं, इत दोए दूसरी ॥१२९॥

याद आवें सारे सुख, और जीव नैनों भी देखे ।
तारतम सब सुख देवहीं, विध विध अलेखे ॥१३०॥

या लीला की बातें इत, जुबां कही न जाए ।
सुख दोऊ इत लीजिए, मनोरथ पुराए ॥१३१॥

या लीला को जो बल, वचन सब केहेसी ।
वचन माएने देखके, सब सुख लेसी ॥१३२॥

धंन धंन ब्रह्मांड ए हुआ, धंन धंन भरथखंड ।
धंन धन जुग सो कलजुग, जहां लीला प्रचंड ॥१३३॥

धंन धंन पुरी नौतन, जहां लीला उदे हुई ।
केताक साथ आइया, दूजिऐं सब कोई ॥१३४॥

धंन धंन धनी साथसों, धंन धंन तारतम ।
पूरन प्रकास ल्याए के, सुख दिए हम ॥१३५॥

तारतम रस बेहद का, सब जाहेर किया ।
बोहोत विधें सुख साथ को, खेल देखते दिया ॥१३६॥

तारतम रस वानी कर, पिलाइए जाको ।
जेहेर चढ़्या होए जिमी का, सुख होवे ताको ॥१३७॥

जो जीव नींद छोड़े नहीं, पिलाइए वानी ।
ल्याए पिउ वतन थें, बल माया जानी ॥१३८॥

जेहेर उतारने साथ को, ल्याए तारतम ।
बेहद का रस श्रवनें, पिलावें हम ॥१३९॥

ए रस श्रवनों जाके झरे, ताए कहा[1] करे जेहेर ।
सुपन ना होवे जागते, देखी तां वैर[2] ॥१४०॥

सुपन होवे नींद थें, कई इंड अलेखे ।
जिन खिन आंखां खोलिए, तब कछुए ना देखे ॥१४१॥

एही रस तारतम का, चढ़्या जेहेर उतारे ।
निरविख[3] काया करे, जीव जागे करारे ॥१४२॥

जागे सुख अनेक हैं, इतही अलेखे ।
वतन सुख लीजिए, जीव नैनों भी देखे ॥१४३॥

सुख बड़े तारतम के, क्यों जाहेर कीजे ।
वानी माएने देखके, जीव जगाए लीजे ॥१४४॥

ए वचन साथ के कारने, मैं तो बाहेर पाड़े ।
दरवाजे बेहद के, अनेक उघाड़े ॥१४५॥

आधे अखर[4] का पाओ लुगा[5], कबूं ना बाहेर ।
श्री धाम थें ल्याए धनी, तो हुए जाहेर ॥१४६॥

या खेल साथ देखहीं, जुदे जुदे होए ।
तो सुख ऐसा पसर्‌या, नाहीं सुख बिना कोए ॥१४७॥

१. क्या । २. दुस्मनी । ३. जहेर बिना । ४. वर्ण, शब्द । ५. हरफ ।

ऐसा खेल छल का, छोड़ाए नहीं ।
ब्रह्मांड की कारीगरी, सारी करी सही ॥१४८॥

कबूतर बाजीगर के, जैसे कंडिया[1] भरिया ।
तबहीं देखे फूंक देए के, तुरत खाली करिया ॥१४९॥

ऐसी बाजी इन छल की, ब्रह्मांड जो रचियो ।
देख बाजी कबूतर, साथ मांहें मचियो ॥१५०॥

आंबों बोए जल सींचियो, तबहीं फूले फलियो ।
बिध बिध की रंग बेलियां, बन ऊपर चढ़ियो ॥१५१॥

एह देख चित भरमिया, सुध नहीं सरीर ।
विकल[2] भई रंग बेलियां, चित नाहीं धीर[3] ॥१५२॥

ततखिन कछू न देखिए, बाजीगर हाथ ।
आंबो ना कछू बेलियां, या रंग बांध्यो साथ ॥१५३॥

बिसरी सुध सरीर की, बिसर गए घर ।
चींटी कुंजर निगलिया, अचरज या पर ॥१५४॥

अचरज एक बड़ो सखी, देखो दिल मांहें ।
वस्त खरी को ले गई, जो कछुए नांहें ॥१५५॥

जोर हुई नींद साथ को, यों सुपन बाढ़्या ।
खेल मिने थें बल कर, न जाए काढ़्या ॥१५६॥

ता कारन बानी बेहद, केहे नींद टालों ।
ना देऊं सुपन पसरने, चढ़्या जेहेर उतारों ॥१५७॥

कुंजर काढ़ों चींटी मुख, सुध आनो सरीर ।
तारतम केहे जुदे जुदे, करों खीर[4] और नीर[5] ॥१५८॥

झूठे को झूठा करूं, सांचा सागर तारूं ।
ए रस श्रवनो पिलाए के, साथ के कारज सारूं ॥१५९॥

१. टोकरी, पिटारी । २. विचलित । ३. धीरज । ४. दूध । ५. पानी (माया ब्रह्म) ।

मोह जेहेर ऐसा जान के, ल्याए तारतम ।
सब विध का ए औखद, प्रकासे खसम ॥१६०॥

सब किया उजाला खेल में, साथ देखन आया ।
और जीव बंधाने या बिध, बिध बिध की माया ॥१६१॥

दूजे तीजे मैं तो कहे, जो साथ को माया भारी ।
तुम देखो सुपना सत कर, तो मैं कह्या विचारी ॥१६२॥

विचार के छल छोड़िए, तो होवे दोऊ पर[1] ।
सुपने भी सुख लीजिए, हरखें जागीए घर ॥१६३॥

तारतम पख दूजा कोई नहीं, बिना साथ सब सुपन ।
जो जगाऊं माया झूठी कर, धाख रहे जिन मन ॥१६४॥

हद के पार बेहद है, बेहद पार अछर ।
अछर[2] पार वतन है, जागिए इन घर ॥१६५॥

ए दोऊ विध मैं तो कही, सुपन हरखें उड़ाऊं ।
कहे इंद्रावती उछरंगे, साथ जुगतें जगाऊं ॥१६६॥

॥प्रकरण॥३१॥चौपाई॥९५४॥

दूध पानी का निबेरा - राग सामेरी

हो वतनी बांधो कमर तुम बांधो, सुरत पिआसों साधो ।
तीनों कांडों बड़ा सुकदेव, ताकी बानी को कहूं भेव ॥१॥

बिन पूछे कहूं विचार, निज वतनी जो निरधार ।
जिन कोई संसे तुमें रहे, सो मेरी आतम ना सहे ॥२॥

एक वचन इत यों सुनाए, चींटी पांउ कुंजर बंधाए ।
तिनके पर्वत ढांपिया, सो तो काहूं न देखिया ॥३॥

चींटी हस्ती को बैठी निगल, ताकी काहूं ना परी कल[3] ।
सनकादिक ब्रह्मा को कहे, जीव मन दोऊ भेले रहे ॥४॥

१. प्रकार । २. अक्षरब्रह्म । ३. पेहेचान ।

ए भेले हुए हैं आद, के भेले हैं सदा अनाद ।
कहे ब्रह्मा भेले नाहीं तित, ए आए मिले हैं इत ।।५।।

तब सनकादिके फेर यों कह्यो, तो ए जुदे करके देओ ।
फेर ब्रह्मांए करी फिकर, तब देखे वचन विचार चित धर ।।६।।

ए समझ मुझसे ना होए, क्यों कर करों जुदे मैं दोए ।
तब सरन विष्णु के गए, अंतरगतें वचन कहे ।।७।।

बैकुंठ नाथे सुने वचन, हंस होए आए ततखिन ।
हंसे रूप धर्यो सुंदर, लिए सनकादिक के चित हर ।।८।।

जीवें हंससों करी पेहेचान, चारों चरन लगे भगवान ।
फेर मनें यों कियो विचार, ले नजरों देख्या आकार ।।९।।

जो जीवें करी पेहेचान, सो मनने तबही दई भान ।
फेर सनकादिकें यों पूछिया, तुम कौन हो यों कर कह्या ॥१०॥

तब हंसे कियो जवाब, समझे सनकादिक भान्यो वाद ।
चित किये चारों के धीर, पर ना हुए जुदे खीर नीर ॥११॥

आओ हंस या और कोए, पर कोई जुदे कर ना देवे दोए ।
दोऊ के जुदे बासन[1], यों कबहूं ना किए किन ॥१२॥

अब याकी कहूं समझन, जुदे कर देऊं जीव और मन ।
समझ के पेहेचानों जिउ, निज वतन जो अपना पिउ ॥१३॥

नहीं राखों तुमें संदेह, इन चारों का अर्थ जो एह ।
जो कोई साध पूछे क्यों, ताए सास्त्र सब केहेवे यों ॥१४॥

अकल अगम बैकुंठ का धनी, ए थोड़ी अजूं करे घनी ।
इन करते सब कछू होए, पर ए अर्थ ना देवे कोए ॥१५॥

यों धोखा रह्या सब मांहें, समझ काहूं ना परी क्यांहें ।
अब समझाऊं देखो बानी, दूध विछोड़ा कर देऊं पानी ॥१६॥

१. पात्र ।

जो तुमें साख देवे आतम, तो सत माएने जानो तारतम ।
इन अंतर देखो उजास, या जीव को बड़ो प्रकास ॥१७॥

चौदे लोक उजाला करे, जो निज वतन दृष्टें धरे ।
याको नूर सदा नेहेचल, नेक कहूंगी याको आगे बल ॥१८॥

ए उजाला इंड न समाए, सो इन जुबां कह्यो न जाए ।
या मन को नाहीं कछू मूल, याथे बड़ा कहिए आक का तूल ॥१९॥

तूल का भी कोटमा हिसा, मन एता भी नहीं ऐसा ।
सो ए गया जीव को निगल, यों सब पर बैठा चंचल ॥२०॥

यों तिनके पर्वत ढांपिया, यों गज चींटी पांऊ बांधिया ।
जो जीव करे उजास, तो मन को आगे ही होए नास ॥२१॥

अब या पर एक कहूं दृष्टांत, देखो आप में वृतांत ।
सुकजी के कहे प्रवान, सात सागर को काढ़्यो निरमान[१] ॥२२॥

भव सागर को नाहीं छेह, सुकजी यों मुख जाहेर कहे ।
पेहेले पांउ भरे तुम जेह, कर सांचा मूल सनेह ॥२३॥

सखी बेन सुन ना रही कोई पल, देखियो एह जीव को बल ।
इन आड़ा था मन संसार, पर जीव निकस्या वार के पार ॥२४॥

देखो पांउ जीवने भरे, भव सागर ए क्यों कर तरे ।
जाको ना निकस्यो निरमान, सुकजीकी वानी प्रमान ॥२५॥

सो फेर कह्यो गौपद बछ, यों भवसागर होए गयो तुछ ।
एता भी ना दृष्टें आया, पर लिखने को नाम धराया ॥२६॥

भव सागर क्यों एता भया, जो जीव खरे जीवनजी ग्रह्या ।
यों मन जीवथें जुदा टल्या, तब झूठा मन झूठे में मिल्या ॥२७॥

खीर नीर देखो विचार, एक धनी दूजा संसार ।
दोऊ बासन[२] में दोऊ जुद, यों नीके कर देखो हिरदे ॥२८॥

१. बनाना । २. पात्र ।

अंतरगत बैठे हैं सही, अंतर उड़ावने बानी कही ।
विचार देखो तो इतहीं पिउ, सागर तबहीं तूल करे जिउ ॥२९॥

तब इतहीं जो वतन पिउ पार, सखी भाव भजिए भरतार ।
आतम महामत है सूरधीर, प्रेमें देखाए जुदे खीर नीर ॥३०॥

॥प्रकरण॥३२॥चौपाई॥९८४॥

श्री भागवत को सार

सुनियो साथ कहूं विचार, फल वस्त जो अपनों सार ।
सो ए देखके आओ वतन, माया अमल से राखो जतन ॥१॥

इन अमल को बड़ो विस्तार, सो ए देखना नहीं निरधार ।
पेहेले आपन को बरजे सही, श्री मुख बानी धनिऐं कही ॥२॥

तिन कारन तुमें देखाऊं सार, मूल वतन के सब प्रकार ।
धनी अपनों धनी को विलास, जिनथें उपज अखंड हुओ रास ॥३॥

ए सुनियो आतम के श्रवन, सो नाहीं जो सुनिए ऊपर के मन ।
वेद को सार कह्यो भागवत, ए फल उपज्यो सास्त्रों के अंत ॥४॥

सो फल सार सुकजीऐं लियो, सींच के अमृत पकव कियो ।
ए फल सार जो भागवत भयो, ताको सार दसम स्कंध कह्यो ॥५॥

दसम के नब्बे अध्या, तिनका सार भी जुदा कह्या ।
ताको सार अध्याय पैंतीस, जो बृजलीला करी जगदीस ॥६॥

जगदीस नाम विष्णु को होए, यों न कहूं तो समझे क्यों कोए ।
ए जो प्रेम लीला श्री कृष्णजीऐं करी, सो गोपन में गोपियों चित धरी ॥७॥

ए ब्रह्म लीला भई जो दोए, बृज लीला रास लीला सोए ।
तामे तीस अध्याय जो बाल चरित्र, ए ब्रह्म लीला उत्तम पवित्र ॥८॥

पंच अध्यायी ताको जो सार, किसोर लीला जोगमाया विस्तार ।
बृज लीला को जो ब्रह्मांड, रात दिन जित होत अखंड ॥९॥

जोग माया जो लीला रास, रात अखंड सब चेतन विलास ।
ए लीला सुकें आवेस में कही, राजा परीछितें सही ना गई ॥१०॥

ए लीला क्यों सही जाए, बैकुंठ को अधिकारी राए ।
सुक के अंग हुओ उलास, जानूं बरनन करूंगो रास ॥११॥

या समें प्रश्न कियो राजान[1], सुक को जोस दियो तिन भान ।
प्रश्न चूक्यो भयो अजान, रास लीला ना बरनवी प्रवान ॥१२॥

तब हाथ निलाटें दियो सही, सुकें दुख पाए के कही ।
मैं जोगी तें राजा भयो, रास को सुख न जाए कह्यो ॥१३॥

ए वानी मेरे मुख थें ना परे, ना तेरे श्रवना संचरे[2] ।
ए जोग आपन नाहीं दोए, तो इन लीला को सुख क्यों होए ॥१४॥

याके पात्र होसी इन जोग, या लीला को सो लेसी भोग ।
केसरी दूध ना रहे रज मात्र, उत्तम कनक[3] बिना जो पात्र ॥१५॥

एह वचन सुनके राए, पड़यो भोम खाए मुरछाए ।
कंपमान होए कलकल्या, रोवे बोहोत अंतस्करन गल्या ॥१६॥

तलफ तलफ दुख पावे मन, अंग मांहें लागी अगिन ।
तब सुकजिऐं दिलासा दिया, आंसूं पोंछ के बैठा किया ॥१७॥

सुनहो राजा द्रढ़ कर मन, अंतरगत केहेता वचन ।
सो केहेने वाला उठके गया, मैं अकेला बैठा रह्या ॥१८॥

अब राजा पूछत मोहे कहा, तुझ सरीखा मैं हो रह्या ।
तब परीछित चरन पकड़ के कहे, स्वामी ए दाझ जिन अंगमें रहे ॥१९॥

मुनीजी मैं बोहोत दुख पाऊं, एह दाझ जिन लिए जाऊं ।
तब भागे जोस कही पंच अध्याई, रास बरनन ना हुआ तिन तांई ॥२०॥

ना तो पंच अध्यायी क्यों कहे सुक मुन, रासलीला अखंड बरनन ।
ए लीला क्यों अध बीच रहे, एकादस द्वादस स्कंध कहे ॥२१॥

१. राजा । २. प्रवेश हो । ३. सोना ।

ए रास लीला को छोड़ के सुख, आधा लुगा न निकसे मुख ।
पर ए केहेवाए धनी के जोस, सो उतर गया वचन के रोस ॥२२॥

क्या करे अधबीच में लिया, अखंड सुख पूरा केहेने ना दिया ।
दोष नहीं राजा को इत, ब्रह्मसृष्टी बिना न पोहोंचे तित ॥२३॥

जाको जाना बैकुंठ बास, सो क्यों सहे अखंड प्रकास ।
तो पार दरवाजे मूंदे रहे, हद के संगिए खोलने ना दिए ॥२४॥

अब सुकजी की केती कहूं बान, सार काढ़ने ग्रह्यो पुरान ।
सबको सार कह्यो ए जो रास, ए जो इंद्रावती मुख हुओ प्रकास ॥२५॥

अब कहूं इन रास को सार, जो तारतम वचन है निरधार ।
तारतम सार जागनी विचार, सबको अर्थ करसी निरवार ॥२६॥

निराकार के पार के पार, तारतम को जागनी भयो सार ।
अछर[1] पार घर अछरातीत[2],धाम के यामें सब चरित्र ॥२७॥

इत ब्रह्म लीला को बड़ो विस्तार, या मुखथें कहा कहूं प्रकार ।
ए तारतम को बड़ो उजास, धनी आएके कियो प्रकास ॥२८॥

संसे काहूं ना रेहेवे कोए, ए उजाला त्रैलोकी में होए ।
प्रगट भई परआतमा, सो सबको साख देवे आतमा ॥२९॥

उड़्यो अंधेर काढ़्यो विकार, निरमल सब होसी संसार ।
ए प्रकास ले धनी आए इत, साथ लीजो तुम मांहें चित ॥३०॥

इन घर बुलावे ए धनी, ब्रह्मसृष्ट जो है अपनी ।
खेल किया सो तुम कारन, ए विचार देखो प्रकास वचन ॥३१॥

देख्यो खेल मिल्यो सब साथ, जागनी रास बड़ो विलास ।
खेलते हंसते चले वतन, धनी साथ सब होए प्रसंन ॥३२॥

इतहीं बैठे जागे घर धाम, पूरन मनोरथ हुए सब काम ।
उड़्यो अग्यान सबों खुली नजर, उठ बैठे सब घर के घर ॥३३॥

१. अक्षर ब्रह्म । २. अक्षरातीत धनी ।

हांसी ना रहे पकरी, धनिऐं जो साथ पर करी ।
हंसते ताली देकर उठे, धनी महामत साथ एकठे ॥३४॥

॥प्रकरण॥३३॥चौपाई॥१०१८॥

पख पुष्ट मरजाद प्रवाह

अब कहूं सो हिरदे रख, अठोत्तर सौ जो है पख ।
एक विचार सुनियो प्रवान, याको सार काढ़ूं निरवान ॥१॥

माया जीव कोई है समरथ, दौड़ करत है कारन अरथ[1] ।
निसंक आपोपा डार्‌या जिन, निहकर्म पैंडा लिया तिन ॥२॥

पुष्ट मरजाद जो प्रवाह पख, याको सार बताऊं लख ।
ताके हिसे किए नौं, चढ़े सीढ़ी भगत जल भौं[2] ॥३॥

भी ताके बांटे किए सताईस, चढ़े ऊंचे सुरत बांध जगदीस ।
सो बांटे किए असी और एक, पोहोंचे बैकुंठ चढ़े या विवेक ॥४॥

तहां चार विध की कही मुगत, करनी माफक पावे इत ।
इतथें जो कोई आगे जाए, निराकार से ना निकसे पाए ॥५॥

पख बयासिमां जो कह्या, वल्लभाचारज तहां पोहोंचिया ।
स्यामा वल्लभियों करी बड़ी दौर, ए भी आए रहे इन ठौर ॥६॥

छेद इंड में कियो सही, पर अखंड दृष्टें आया नहीं ।
आड़ी सुंन भई निराकार, पोहोंच ना सके ताके पार ॥७॥

इनों की तो एह सनंध, पीछे फेर पकड़्या प्रतिबिंब ।
और साध अलेखे केते कहूं, निसंक दौड़ करी जिनहूं ॥८॥

ग्यानी अनेक कथें बहु ग्यान, ध्यानी कई बिध धरें ध्यान ।
पर ए सबही सुन्य के दरम्यान, छूट्या न काहूं संसे उनमान ॥९॥

उपासनी निरगुन या निरंजन, किन उलंघ्यो न जाय विष्णु को कारन[3] ।
या सास्त्र या साधू जन, द्वैत सबे समानी सुंन ॥१०॥

१. धन, सम्पत्ति । २. भव सागर उतरने के लिए । ३. कारण स्वरूप (इच्छा शक्ति, सात शून्य) ।

इन ऊपर पख है एक, सुनियो ताको कहूं विवेक ।
पुरुख प्रकृती उलंघ के गए, जाए अखंड सुख मांहें रहे ॥११॥
त्रासिमा पख प्रवान, जो वासना पांचों लिया निरवान ।
ए पांचो कहूं अपनायत[१] कर, देखांऊं सब्दातीत घर ॥१२॥
ना तो प्रबोध[२] काहे को कहूं, चरन पिया के प्रेमें ग्रहूँ ।
पर साथ कारन कहूं फेर फेर, ए पांचो नाम लीजो चित धर ॥१३॥
एक भगवानजी बैकुंठ को नाथ, महादेवजी भी इनके साथ ।
सुकजी और सनकादिक दोए, कबीर भी इत पोहोंच्या सोए ॥१४॥
लखमी नारायन जुदे ना अंग, सो तो भेले विष्णु के संग ।
ए पांचो कहे मैं तिन कारन, चित ल्याए देखो याके वचन ॥१५॥
देखो सब्द इनों की रोसनी, पर जानेगा बड़ी मत का धनी ।
पख पचीस या ऊपर होय, तारतम के वचन हैं सोए ॥१६॥
इन वचनों में अछरातीत[३], श्री धाम धनी साथ सहीत ।
ए देखो तारतम को उजास, धनी ल्याए कारन साथ ॥१७॥
तुम आपको ना करो पेहेचान, बोहोत ताए कहिए जो होए अजान ।
तुम जो हो इन घर के प्रवान[४], सुनते क्यों ना होत गलतान ॥१८॥
सनेहसों सेवा कीजो धनी, घर की पेहेचान देखियो अपनी ।
तुम प्रेम सेवाएं पाओगे पार, ए वचन धनी के कहे निरधार ॥१९॥
पीछला साथ आवेगा क्योंकर, प्रकास वचन हिरदे में धर ।
चरने हैं सो तो आए सही, पर पीछले कारन ए बानी कही ॥२०॥
आवसी साथ ए देख प्रकास, अंधकार सब कियो नास ।
एह वचन अब केते कहूं, इन लीला को पार ना लहूं ॥२१॥
या वानी को नाहीं पार, साथ केता करसी विचार ।
तिन कारन बोहोत कह्यो न जाए, ए तो पूर बहे दरियाए ॥२२॥

१. अपना जान कर । २. उपदेश । ३. अक्षरातीत धनी । ४. निश्चय ।

याको नेक विचारे जो एक वचन, ताए घर पेहेचान होवे मिने खिन ।
जो वासना होसी इन घर, सो एह वचन छोड़े क्यों कर ॥२३॥

ए वचन सुनते बाढ़े बल, सोई लेसी तारतम को फल ।
तारतम फल जागिए इन घर, कहे महामती ए हिरदे धर ॥२४॥

॥प्रकरण॥३४॥चौपाई॥१०४२॥

गुनन की आसंका

अब कछुक मैं अपनी करूं, ना तो तुमे बोहोतक ओचरूं ।
भी एक कहूं वचन, तुमको संसे रेहेवे जिन ॥१॥

मैं धाम धनी गुन लिखे सही, एक आसंका मेरे मनमें रही ।
मैं गेहेरे सब्द कहे निरधार, सो साथ क्यों करसी विचार ॥२॥

जोलों आतम ना देवे साख, तोलों प्रबोध[1] भले दीजे दस लाख ।
पर सो क्योंए ना लगे एक वचन, जोलों ना समझे आतम बुध मन ॥३॥

ताथें यों दिल आई हमको, जिन कोई संसे रहे तुमको ।
एक प्रवाही वचन यों कहे, मुख थें कहे पर अर्थ ना लहे ॥४॥

सुई के नाके मंझार, कुंजर कई निकसे हजार ।
ए अर्थ भी होसी इतहीं, तारतम आसंका राखे नहीं ॥५॥

मैं गुन लिखते कही लेखन अनी, ए आसंका जिन होसी घनी ।
कथुए के पांऊ प्रवान, कलमे गढ़िया[2] हाथ सुजान ॥६॥

तिनकी भी मैं करी चीर, गुन जेती उतारी लीर[3] ।
अब जिन किनको संसे रहे, तारतम संसे कछू ना सहे ॥७॥

या पर एक कहूं विचार, सुनियो ब्रह्मसृष्ट सिरदार ।
ए चौद भवन देखो आकार, याके मूल को करो विचार ॥८॥

याको सास्त्र सुपनांतर कहे, कोई याको जीव याको ना लहे[4] ।
ए सुपन मूल तो है समरथ, याके मूल को देखो अर्थ[5] ॥९॥

१. उपदेश, यथार्थ ज्ञान । २. घड़ना । ३. छिलका । ४. पावे । ५. मायना ।

सुपन मूल तो नींद जो भई, जब जाग उठे तब कछुए नहीं ।
याको पेड़ कछू ना रह्यो लगार, कथुए[1] के पांउ का तो मैं कह्या आकार ॥१०॥
बिना पेड़ देखो विस्तार, एता बड़ा किया आकार ।
एतो पेड़ कह्या आकार, तो ताको क्यों ना होए विस्तार ॥११॥
यों सूई के नाके मांहें, कई लाखों ब्रह्मांड निकसे जांए ।
अब ए नीके लीजो अर्थ[2], गुन लिखने वालो समरथ ॥१२॥
अब केता कहूं तुमको विस्तार, एक एह सब्द लीजो निरधार ।
फेर फेर कहूं मेरे साथ, नीके पेहेचानो प्राण को नाथ ॥१३॥
गुन लिखने वालो सो एह, आपन मांहें बैठा जेह ।
इंद्रावती कहे दिल दे रे दे, जिन गुन किए सो ए रे ए ॥१४॥
तेरे केहेना होए सो केहे रे केहे, लाभ लेना होए सो ले रे ले ।
तारतम केहेत है आ रे आ, हजार बार[3] कहूं हां रे हां ॥१५॥
मायासों कीजो ना रे ना, नाबूद फेरा जिन खा रे खा ।
धनी के चरने जा रे जा, ऐसा न पावे दा रे दा ॥१६॥
जो चूक्या अबको ता रे ता, तो सिर में लगसी घा रे घा ।
संसार में नहीं कछू सा रे सा, श्री धामधनी गुन गा रे गा ॥१७॥
लीजो मूल को भाओ रे भाओ, जिन छोड़े अपनो चाहो रे चाहो ।
प्रेमें पकड़ पिउ के पाए रे पाए, ज्यों सब कोई कहे तोको वाहे रे वाहे ॥१८॥

॥प्रकरण॥३५॥चौपाई॥१०६०॥

गुन केते कहूं मेरे पिउ जी, जो हमसों किए अनेक जी ।
ए बुध इन आकार की, क्यों कहे जुबां विवेक जी ॥१॥
माया मांगी सो देखाए के, भानी मन की भ्रांत जी ।
सब सुख दिए जगाए के, कई विध के द्रष्टांत जी ॥२॥

१. बारीक से बारीक कीड़ा । २. मायना । ३. बखत ।

बृज के सुख इत आए के, हमको अलेखे दिए जी ।
रास के सुख इत देएके, आप सरीखे किए जी ।।३।।
कई विध विध के सुख धाम के, जो हमको दिए इत जी ।
तारतम करके रोसनी, कई बिध करी प्राप्त जी ।।४।।
सेहेजल सुख में झीलते, काहूं दुख न सुनिया नाम जी ।
सो माया में इत आए के, सुख अखंड देखाया धाम जी ।।५।।
कहे इंद्रावती अति उछरंगे, हमको लाड़ लड़ाए जी ।
निरमल नेत्र किए जो आतम के, परदे दिए उड़ाए जी ।।६।।
आप पेहेचान कराई अपनी, लई अपने पास जगाए जी ।
बड़ी बड़ाई दई आपथें, लई इंद्रावती कंठ लगाए जी ।।७।।

।।प्रकरण।।३६।।चौपाई।।१०६७।।

श्री प्रगटवाणी

निजनाम श्री जी साहिब जी, अनादि अछरातीत ।
सो तो अब जाहेर भए, सब विध वतन सहीत ।।१।।
श्री स्यामाजी वर सत्य हैं, सदा सत सुख के दातार ।
विनती एक जो वल्लभा, मो अंगना की अविधार ।।२।।
वानी मेरे पिउ की, न्यारी जो संसार ।
निराकार के पार थें, तिन पार के भी पार ।।३।।
अंग उत्कण्ठा उपजी, मेरे करना एह विचार ।
ए सत वानी मथ के, लेऊं जो इनको सार ।।४।।
इन सार में कई सत सुख, सो मैं निरने करूं निरधार ।
ए सुख देऊं ब्रह्मसृष्ट को, तो मैं अंगना नार ।।५।।
जब ए सुख अंग में आवहीं, तब छूट जाएं विकार ।
आयो आनन्द अखण्ड घर को, श्री अछरातीत भरतार ।।६।।

अब लीला हम जाहेर करें, ज्यों सुख सैयां हिरदे धरें ।
पीछे सुख होसी सबन, पसरसी चौदे भवन ।।७।।

अब सुनियो ब्रह्मसृष्ट विचार, जो कोई निज वतनी सिरदार ।
अपनों धनी श्री स्यामा स्याम, अपना वासा है निज धाम ।।८।।

सोई अखंड अछरातीत घर, नित्य बैकुंठ मिने अछर ।
अब ए गुझ करूं प्रकास, ब्रह्मानंद ब्रह्मसृष्ट विलास ।।९।।

ए बानी चित दे सुनियो साथ, कृपा करके कहें प्राणनाथ ।
ए किव कर जिन जानो मन, श्री धनीजी ल्याए धामथें वचन ॥१०॥

सो केहेती हूं प्रगट कर, पट टालूं आड़ा अंतर ।
तेज तारतम जोत प्रकास, करूं अंधेरी सबको नास ॥११॥

अब खेल उपजे के कहूं कारन, ए दोऊ इछा भई उतपन ।
बिना कारन कारज नहीं होए, सो कहूं याके कारन दोए ॥१२॥

ए उपजाई हमारे धनी, सो तो बातें हैं अति घनी ।
नेक तामें करूं रोसन, संसे भान देऊं सबन ॥१३॥

अब सुनियो मूल वचन प्रकार, जब नहीं उपज्यो मोह अहंकार ।
नाहीं निराकार नाहीं सुन्य, ना निरगुन ना निरंजन ॥१४॥

ना ईस्वर ना मूल प्रकृती, ता दिन की कहूं आपा बीती ।
निज लीला ब्रह्म बाल चरित्र, जाकी इछा मूल प्रकृत ॥१५॥

नैन की पाओ पल में इसारत, कई कोट ब्रह्मांड उपजत खपत ।
इत खेल पैदा इन रवेस, त्रैलोकी ब्रह्मा विष्णु महेस ॥१६॥

कई बिध खेलें यों प्रकृत, आप अपनी इछासों खेलत ।
या समें श्री बैकुंठ नाथ[१], इछा दरसन करने साथ ॥१७॥

अछर मन उपजी ए आस, देखों धनीजी को प्रेम विलास ।
तब सखियों मन उपजी एह, खेल देखें अछर[१] का जेह ॥१८॥

१. अक्षर ब्रह्म ।

तब हम जाए पियासों कही, खेल अछर का देखें सही ।
जब एह बात पिया ने सुनी, तब बरजे हांसी करने घनी ॥१९॥

मने किए हमको तीन बेर, तब हम मांग्या फेर फेर फेर ।
धनी कहें घर की ना रेहेसी सुध, भूलसी आप ना रेहेसी ए बुध ॥२०॥

तो मने करत हैं हम, हमको भी भूलोगे तुम ।
तब हम फेर धनीसों कह्या, कहा करसी हमको माया ॥२१॥

तब हम मिल के कियो विचार, कह्या एक दूजी को हूजो हुसियार ।
खेल देखन की हम पियासों कही, तब हम दोऊ पर अग्या भई ॥२२॥

ए कहे दोऊ भिंन भिंन, खेल देखन के दोऊ कारन ।
उपज्यो मोह सुरत संचरी[1], खेल हुआ माया विस्तरी ॥२३॥

इत अछर को विलस्यो मन, पांच तत्व चौदे भवन ।
यामें महाविष्णु मन मन थें त्रैगुन, ताथें थिर चर सब उतपन ॥२४॥

या बिध उपज्यो सब संसार, देखलावने हमको विस्तार ।
जो अग्या भई हम पर, तब हम जान्या गोकुल घर ॥२५॥

ज्यों नींद में देखिए सुपन, यों उपजे हम बृज वधू जन ।
उपजत ही मन आसा घनी, हम कब मिलसी अपने धनी ॥२६॥

जेती कोई हैं ब्रह्मसृष्ट, प्रेम पूरन धनी पर द्रष्ट ।
कंस के बंध वसुदेव देवकी, इत आई सुरत चत्रभुज की ॥२७॥

सुरत विष्णु की चत्रभुज जोए, दियो दरसन वसुदेव को सोए ।
पीछे फिरे केहेके हकीकत, अब दोए भुजा की कहूं विगत ॥२८॥

मूल सुरत अछर की जेह, जिन चाह्या देखों प्रेम सनेह ।
सो सुरत धनी को ले आवेस, नंद घर कियो प्रवेस ॥२९॥

दो भुजा सरूप जो स्याम, आतम अछर जोस धनी धाम ।
ए खेल देख्या सैयां सबन, हम खेले धनी भेले आनंद घन ॥३०॥

१. विस्तार हुई ।

बाल चरित्र लीला जोबन, कई विध सनेह किए सैयन ।
कई लिए प्रेम विलास जो सुख, सो केते कहूं या मुख ॥३१॥

ए काल माया में विलास जो करे, सो पूरी नींद में सब बिसरे ।
पूरी नींद को जो सुपन, काल माया नाम धराया तिन ॥३२॥

तब धाम धनिऐं कियो विचार, ए दोऊ मगन हुए खेलें नर नार ।
मूल वचन की नाहीं सुध, ए दोऊ खेलें सुपने की बुध ॥३३॥

एह बात धनी चितसों ल्याए, आधी नींद दई उड़ाए ।
अग्यारे बरस और बावन दिन, ता पीछे पोहोंचे वृन्दावन ॥३४॥

तहां जाए के बेन बजाई, सखियां सबे लई बुलाई ।
तामसियां राजसियां चलीं, स्वांतसियां सरीर छोड़ के मिलीं ॥३५॥

और कुमारका बृज वधू संग जेह, सुरत सबे अछर की एह ।
जो व्रत करके मिली संग स्याम, मूल अंग याके नाहीं धाम ॥३६॥

बेन सुनके चली कुमार, भव सागर यों उतरी पार ।
इनकी सुरत मिली सब सखियों मांहें, अंग याके रास में नांहें ॥३७॥

या विध मुक्त इनों की भई, कुमारका सखियां जो कही ।
ए जो अग्यारे बरस लो लीला करी, काल माया तितही परहरी ॥३८॥

कछू नींद कछू जाग्रत भए, जोग माया के सिनगार जो कहे ।
जोगमाया में खेले जो रास, आनन्द मन आनी उलास ॥३९॥

जोगमाया में खेल जो खेले, संग जोस धनी के भेले ।
जोगमाया में बाढ़्यो आवेस, सुध नहीं दुख सुख लवलेस ॥४०॥

फेर मूल सरूपें देख्या तित, ए दोऊ मगन हुए खेलत ।
जब जोस लियो खेंच कर, तब चित चौंक भई अछर ॥४१॥

कौन बन कौन सखियां कौन हम, यों चौंक के फिरी आतम ।
रास आया मिने जाग्रत बुध, चुभ रही हिरदे में सुध ॥४२॥

कई सुख रास में खेले रंग, सो हिरदे में भए अभंग ।
या विध रास भयो अखंड, थिरचर जोगमाया को ब्रह्मांड ॥४३॥

तब इत भए अंतरध्यान, सब सखियां भई मृतक समान ।
जीव न निकसे बांधी आस, करने धनीसों प्रेम विलास ॥४४॥

विरह सैयों ने कियो अत, धनी दियो आवेस फेर आई सुरत ।
तब सैयों को उपज्यो आनंद, सब विरहा को कियो निकंद ॥४५॥

आया सरूप कर नए सिनगार, भजनानंद सुख लिए अपार ।
दोऊ आतम खेले मिने खांत, सुख जोस दियो कई भांत ॥४६॥

कई विरह विलास लिए मिने रात, अंग आनंद भयो जोलों प्रात ।
रास खेल के फिरे सब एह, साथ सकल मन अधिक सनेह ॥४७॥

पीछे जोग माया को भयो पतन, तब नींद रही अछर सैयन ।
बृज लीलासों बांधी सुरत, अखंड भई चढ़ आई चित ॥४८॥

अछर चितमें ऐसो भयो, ताको नाम सदा सिव कह्यो ।
बृज रास दोऊ ब्रह्मांड, ए ब्रह्म लीला भई अखंड ॥४९॥

बृज रास लीला दोऊ मांहें, दुख तामसियों देख्या नांहें ।
प्रेम पियासों ना करे अंतर, तो ए दुख देखें क्यों कर ॥५०॥

कछुक हमको रह्यो अंदेस, सो राखे नहीं धनी लवलेस ।
ता कारन ए भयो सुपन, हुए हुकमें चौदे भवन ॥५१॥

काल माया को ए जो इंड, उपज्यो और जाने सोई ब्रह्मांड ।
ए तीसरा इंड नया भया जो अब, अछर की सुरत का सब ॥५२॥

याही सुरत की सखियां भई, प्रतिबिंब वेद रूचा[1] जो कही ।
जाको कह्यो ऊधो ग्यान जोगारंभ, सो क्यों माने प्रेमलीला प्रतिबिंब ॥५३॥

जो ऊधो ने दई सिखापन, सो मुख पर मारे फेर वचन ।
याही विरह में छोड़ी देह, सो पोहोंची जहां सरूप सनेह ॥५४॥

१. वेद ऋचाएँ ।

अछर हिरदे रास अखंड कह्यो, ए प्रतिबिंब साथ तहां पोहोंचयो ।
ए प्रतिबिंब लीला भई जो इत, सो कारन ब्रह्मसृष्ट के सत ॥५५॥
जो प्रगट लीला न होवे दोए, तो असल नकल की सुध क्यों होए ।
ता कारन ए भई नकल, सुध करने संसार सकल ॥५६॥
सारे अर्थ तब होवें सत, जो प्रगट लीला दोऊ होवें इत ।
याही इंड में श्रीकृष्णजी भए, सो अग्यारे दिन बृज मथुरा रहे ॥५७॥
दिन अग्यारे ग्वालो भेस, तिन पर नहीं धनी को आवेस ।
सात दिन गोकुल में रहे, चार दिन मथुरा के कहे ॥५८॥
गज मल कंस को कारज कियो, उग्रसेन को टीका दियो ।
काला ग्रह में दरसन दिए जिन, आए छुड़ाय बंध थें तिन ॥५९॥
वसुदेव देवकी के लोहे भांन, उतार्‌यो भेख किए अस्नान ।
जब राज बागे को कियो सिनगार, तब बल पराक्रम ना रह्यो लगार ॥६०॥
आय जरासिंध मथुरा घेरी सही, तब श्रीकृष्णजी को अति चिंता भई ।
यों याद करते आया विचार, तब कृष्ण विष्णु मय भए निरधार ॥६१॥
तब बैकुंठ में विष्णु ना कहे, इत सोलेकला संपूरन भए ।
या दिन थें भयो अवतार, ए प्रगट वचन देखो विचार ॥६२॥
सिसुपाल की जोत वैकुण्ठ गई, समाई श्रीकृष्ण में तित ना रही ।
आउध अपने मंगाए के लिए, कई बिध जुध असुरों सों किए ॥६३॥
मथुरा द्वारका लीला कर, जाए पोहोंचे विष्णु बैकुंठ घर ।
अब मूल सखियां धाम की जेह, तिन फेर आए धरी इत देह ॥६४॥
उमेदां तामसियां रही तिन बेर, सो देखन को हम आइयां फेर ।
इन ब्रह्मांड को एह कारन, सुनियो आतम के श्रवन ॥६५॥
रास खेलते उमेदां रहियां तित, सो ब्रह्मसृष्ट सब आइयां इत ।
यामें सुरत आई स्यामाजी की सार, मतू मेहेता घर अवतार ॥६६॥

कुंवरबाई माता को नाम, उत्तम काइथ उमरकोट गाम ।
आए श्री देवचंदजी नौतनपुरी, सुख सबों को देने देह धरी ॥६७॥

इन इत आए करी बड़ी खोज, चाहे धनी को मूल संजोग ।
अंग मूल उपजी ए दृष्ट, सास्त्र सब्द खोजे कई कष्ट ॥६८॥

चौदे बरसलों नेष्टा बंध, वचन ग्रहे सारी सनंध ।
कई जप तप किए व्रत नेम, सेवा सरूप सनेह अति प्रेम ॥६९॥

कई कसनी कसी अति अंग, प्रेम सेवा में ना कियो भंग ।
कई कसौटी करी दुलहिन, सो कारन हम सब सैयन ॥७०॥

पिया किए अति प्रसन, तीन बेर दिए दरसन ।
तारतम बात वतन की कही, आप धाम धनी सब सुध दई ॥७१॥

धर्‌यो नाम बाई सुन्दर, निज वतन देखाया घर ।
इत दया करी अति घनी, अंदर आए के बैठे धनी ॥७२॥

दियो जोस खोले दरबार, देखाया सुन्य के पार के पार ।
ब्रह्मसृष्ट मिने सुन्दरबाई, ताको धनीजीएं दई बड़ाई ॥७३॥

सब सैयों मिने सिरदार, अंग याही के हम सब नार ।
श्री धाम धनीजी की अरधंग, सब मिल एक सरूप एक अंग ॥७४॥

श्री धाम लीला बैकुंठ अखंड, बृज रास लीला दोऊ ब्रह्मांड ।
ए सब हिरदे में चढ़ आए, ज्यों आतम अनुभव होत सदाए ॥७५॥

अब ए केते कहूं प्रकार, निजधाम लीला नित बड़ो विहार ।
अछरातीत लीला किसोर, इत सैयां सुख लेवें अति जोर ॥७६॥

मोहोल मंदिर को नाहीं पार, धाम लीला अति बड़ो विस्तार ।
इन लीला की काहूं ना खबर, आज लगे बिना इन घर ॥७७॥

ब्रह्मसृष्ट बिना न जाने कोए, ए सृष्ट ब्रह्मथें न्यारी न होए ।
सो निध ब्रह्मसृष्ट ल्याईयां इत, ना तो ए लीला दुनिया में कित ॥७८॥

ए बानी धनी मुखथें कहे, सो ए दुनियां क्यों कर लहे ।
गांगजी भाई मिले इन अवसर, तिन ए वचन लिए चित धर ॥७९॥

कर विचार पूछे वचन, नीके अर्थ लिए जो इन ।
जब समझाई पार की बान, तब धनी की भई पेहेचान ॥८०॥

अपने घरों लिए बुलाए, सेवा करी बोहोत चित ल्याए ।
सनेहसों सेवा करी जो घनी, पेहेचान के अपना धाम धनी ॥८१॥

तब श्रीमुख वचन कहे प्राणनाथ, ढूंढ काढ़नो अपनो साथ ।
माया मिने आई सृष्ट ब्रह्म, सो बुलावन आए हैं हम ॥८२॥

हम आए हैं इतने काम, ब्रह्मसृष्ट लेने घर धाम ।
तब गांगजी भाई पायो अचरज मन, कौन मानसी पार के वचन ॥८३॥

कह्या ब्रह्मसृष्ट क्यों मिलसी, चाल तुमारी क्यों चलसी ।
मोहजल पूर तीखा अति जोर, नख अंगुरी को ले जाए तोर ॥८४॥

तरंग बड़े मेर से होए, इत खड़ा ना रेहेने पावे कोए ।
लेहेरें पर लेहेरें मारे घेर, मांहें देत भमरियां फेर ॥८५॥

आड़े टेढ़े मांहें बेहेवट, विक्राल जीव मांहें विकट ।
दुखरूपी सागर निपट, किनार बेट न काहूं निकट ॥८६॥

ऊंचा नीचा गेहेरा गिरदवाए, कठन समया इत पोहोंच्या आए ।
हाथ ना सूझे सिर ना पाए, इन अंधेरी से निकस्यो न जाए ॥८७॥

चढ़यो माया को जोर अमल, भूलियां आप मांहें घर छल ।
ना सुध धनी ना मूल अकल, इन मोहजल को ऐसो बल ॥८८॥

वचन बेहद के पार के पार, सो क्यों माने हद को संसार ।
त्रैगुन महाविष्णु मोह अहंकार, ए हद सास्त्रों करी पुकार ॥८९॥

ब्रह्मसृष्ट भी धरे मोह के आकार, सो इत आवसी कौन प्रकार ।
तब श्रीधनीजीएं कहे वचन, बेहेर दृष्ट होसी रोसन ॥९०॥

ए बंधेज कियो अति जोर, रात मेट के करसी भोर ।
प्रतछ प्रमान देसी दरसन, ए लीला चित धरसी जिन ॥९१॥

साथ कारन आवसी धनी, घर घर वस्तां देसी घनी ।
साथ मांहें इत आरोगसी, विध विध के सुख उपजावसी ॥९२॥

अचरा पकर पिउ देखलावसी, एक दूजी को प्रेम सिखलावसी ।
ए लीला बढ़सी विस्तार, साथ अंग होसी करार ॥९३॥

तब बानी को करसी विचार, सब माएने होसी निरवार ।
तब आवसी ब्रह्मसृष्ट, जाहेर निसान देखसी दृष्ट ॥९४॥

ए बंधेज कियो उत्तम, पर धामकी निध सो कही तारतम ।
जिन सेती होवे पेहेचान, नजरों आवे सब निसान ॥९५॥

तब गांगजी भाई पाए मन उछरंग, किए करतब अति घनें रंग ।
सनेहसों सेवा करी जो अत, पेहेचान के धाम धनी हुए गलित ॥९६॥

साथसों हेत कियो अपार, सुफल कियो अपनो अवतार ।
मैं श्रीसुंदरबाई के चरने रहूं, एह दया मुख किन विध कहूं ॥९७॥

कह्यो ताको इंद्रावती नाम, ब्रह्मसृष्ट मिने घर धाम ।
मों पर धनी हुए प्रसन्न, सोंपे धाम के मूल वचन ॥९८॥

आद के द्वार ना खुले आज दिन, ऐसा हुआ ना कोई खोले हम बिन ।
सो कुंजी दई मेरे हाथ, तूं खोल कारन अपने साथ ॥९९॥

मोहे करी सरीखी आप, टालने हम सबों की ताप ।
आतम संग भई जाग्रत बुध, सुपनथें जगाए करो मोहे सुध ॥१००॥

श्रीधनीजी को जोस आतम दुलहिन, नूर हुकम बुध मूल वतन ।
ए पांचो मिल भई महामत, वेद कतेबों पोहोंची सरत ॥१०१॥

या कुरान या पुरान, ए कागद दोऊ प्रवान ।
याके मगज माएने हम पास, अंदर आए खोले प्राणनाथ ॥१०२॥

आप भी ना खोले दरबार, सो मुझ से खोलाए कियो विस्तार ।
मोहे दई तारतम की करनवार, सो काहूं न अटको निरधार ॥१०३॥

सब संसे को कियो निरवार, कोई संसा ना रह्या वार के पार ।
रोसन करूं लेऊं हुकम बजाए, ब्रह्मसृष्ट और दुनियां देऊं जगाए ॥१०४॥

द्वार तोबा के खुले हैं अब, पीछे तो दुनियां मिलसी सब ।
जब द्वार तोबा के मूंदयो, रैन गई भोर जो भयो ॥१०५॥

या भली या बुरी, जिनहूं जैसी फैल जो करी ।
तब आगूं आई सबों की करनी, जिन जैसी करी आप अपनी ॥१०६॥

तब कोई नहीं किसी के संग, दुख सुख लेवे अपने अंग ।
करूं ब्रह्मसृष्ट को मिलाप, अखंड सूर उदे भयो आप ॥१०७॥

विश्व मिली करने दीदार, पीछे कोई ना रहे मिने संसार ।
ब्रह्मसृष्ट को पिया संग सुख, सो कह्यो न जाए या मुख ॥१०८॥

ब्रह्मसृष्ट को ऐसो नूर, जो दुनियां थी बिना अंकूर ।
ताए नए अंकूर जो कर, किए नेहेचल देख नजर ॥१०९॥

श्री धनीजी को दीदार सब कोई देख, होए गई दुनियां सब एक ।
किनहूं कछुए ना कह्यो, क्रोध ब्रोध काहूको ना रह्यो ॥११०॥

श्री धनीजी को ऐसो जस, दुनियां आपे भई एक रस ।
तेज जोत प्रकास जो ऐसो, काहूं संसे ना रह्यो कैसो ॥१११॥

सब जातें मिली एक ठौर, कोई ना कहे धनी मेरा और ।
पिया के विरह सों निरमल किए, पीछे अखंड सुख सबों को दिए ॥११२॥

ए ब्रह्मलीला भई जो इत, सो कबहूं हुई ना होसी कित ।
ना तो कई उपज गए इंड, भी आगे होसी कई ब्रह्मांड ॥११३॥

ए तीन ब्रह्मांड हुए जो अब, ऐसे हुए ना होसी कब ।
इन तीनों में ब्रह्मलीला भई, बृज रास और जागनी कही ॥११४॥

ज्यों नींद में देखिए सुपन, यों बृज को सुख लियो सैयन ।
सुपन जोगमाया को जोए, आधी नींद में देख्या सोए ॥११५॥

कछुक नींद कछुक सुध, रास को सुख लियो या विध ।
जागनी को जागते सुख, ए लीला सुख क्यों कहूं या मुख ॥११६॥

जागनी में लीला धाम जाहेर, निसान हिरदे लिए चित धर ।
तब उपज्यो आनंद सबों करार, ले नजरों लीला नित विहार ॥११७॥

इतहीं बैठे घर जागे धाम, पूरन मनोरथ हुए सब काम ।
धनी महामत हँस ताली दे, साथ उठा हँसता सुख ले ॥११८॥

।।प्रकरण।।३७।।चौपाई।।११८५।।

प्रकरण तथा चौपाइयों का संपूर्ण संकलन
प्रकरण १४८, चौपाई ३८९८

।। प्रकास हिन्दुस्तानी-जंबूर सम्पूर्ण।।